गजराज

स्वामीजी की बात··

चम्पा

स्वामीजी अपनी बात के लिये किसीको आग में नहीं न डाल देंगे। अच्छे स्वामीजी रहे। इतनी सुन्दर चाँदनी रात—सारी सृष्टि जैसे सुख और शान्ति से भर उठी है, बाहर साँय-साँय करती हुई निर्द्वन्द्व हवा चल रही है, सामने मौलसिरी के पेड़ पर कू-कू-कू से कोयल जैसे आकाश को हिला रही है, और तुम्हारे स्वामीजी बन्द कमरे में सोना चाहते हैं! इस समय उन्हें किसी पर्वत की चोटी पर, किसी नदी के निर्जन किनारे पर, किसी घने जंगल के बीच में, चाँदनी बिछाकर और चाँदनी ओढ़कर, सो रहना चाहिये। इस कमरे में सोना, और जहाँ तक मैं अनुमान करती हूँ, खिड़कियों और दरवाजों को बन्द कर [ गजराज की ओर देखकर ] तुम्हें विश्वास नही होता न? देखना, यही होगा, अक्षर-अक्षर यही होगा; मैं कह तो रही हूँ, देख लेना, यही होगा। तुम्हारे सरकार प्राचीनता के विरोधी हैं। पुरानी सभी बातें उनके लिये बुरी हैं; उनमें कोई सार नहीं। तीर्थ और व्रत सब कुछ आडम्बर और ढकोसला

# राजयोग

कालेज संस्करण



श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र

ग्रन्थ-संख्या—३७

प्रकाशक—

भारती-भण्डार

( पुस्तक-प्रकाशक तथा विक्रेता )

रामघाट, बनारस

मू० १।)

प्रथमवार

सं० '९८

मुद्रक—

विजयबहादुरसिंह, बी० ए०

महाशक्ति-प्रेस,

बुलानाला, बनारस सिटी

# प्राक्कथन

नाट्यकला संस्कृत में सैकड़ों वर्ष से प्रचलित है। केवल ग्रीस में कुछ इने-गिने नाट्यकार उस समय में वर्तमान थे। शोकान्त नाटक लिखने में ईस्किलस, सोफौक्लीज़, और यूरिपिडीज़ प्रधान थे और सुखान्त नाटक और प्रहसन के लिखने में ऐरिस्टौफेनीज़ सिद्धहस्त थे। इन्हीं चार-पाँच कवियों की रचनाओं के सहारे अरिस्तू ने नाटक के सिद्धांतों का निर्णय इस सुचारु रूप से किया कि यूरप में अब भी उनका बड़ा सम्मान है। उनके बताये हुए नियमों का पालन कवियों का कर्त्तव्य-सा हो गया है। वर्षों तक समालोचक 'नाटक अच्छा है कि नहीं' इस प्रश्न के उत्तर में यही देखा करते थे कि इसमें अरिस्तू के नियमों का पालन हुआ है अथवा नहीं। उनके कुछ नियम तो सर्वदा आदरणीय रहेंगे क्योंकि उनका सम्बन्ध काव्य के मूल अङ्गों से है, परन्तु कुछ ऐसे भी नियम हैं जिनका काल के परिवर्तन से अब पालन हानिकारक और निरर्थक है। वर्तमान समय में

यूरप में नाट्यकार यदि उच्छृंखल नहीं तो स्वतंत्र अवश्य हो गये हैं। नियमों का परिपालन उनके लिये दुष्कर हो गया है। स्वाभिरुचि एकमात्र पथप्रदर्शक का काम करती है। इसका फल यह है कि जो लेखक के चित्त की प्रवृत्ति है उसीका, अविकल रूप में, प्रतिबिम्ब नाटक में मिलता है। अरिस्तू के पहले भी यही दशा थी। ईस्किलस के नाटक में हम उसकी आस्तिकता की झलक पाते हैं; सोफ़ौक्लीज़ कभी-कभी घबड़ा जाता है परन्तु देवता में उसकी श्रद्धा बनी रहती है; यूरिपिडीज़ तो देवताओं को भी मनुष्य के समान निर्बल और निस्सहाय समझता है। अपने मत को, अपनी प्रकृति को, अपने विश्वासों, आकांक्षाओं, स्वप्नों को, किसी-न-किसी रूप से ये सभी अपनी कला में स्थान दे देते थे। भेद केवल इतना है कि ये महाकवि थे और आजकल के स्वेच्छाचारी लेखकों में थोड़े ही कवि के पदवी के योग्य हैं।

संस्कृत का नाट्यसाहित्य किसी और भाषा से कम नही है—संख्या में अथवा गुणों में। लेकिन जिस समय में इनका विकास हुआ उस समय मनुष्य की सबसे प्रधान चिन्ता ईश्वराराधना थी। देवताओं की कृपा अथवा उनका क्रोध; फिर राजा महाराजाओं की क्रियायें; तब धार्मिक

और दार्शनिक मतमतान्तर बस इन्हीं विषयों का संमावेश बहुधा संस्कृत नाट्यकारों ने किया। भरतमुनि का वाक्य था—

'देवानामसुराणां च राजलोकस्यचैव हि।
ब्रह्मर्षीणां च विज्ञेयं नाट्यं वृत्तान्तदर्शकम्॥'

शोकान्त नाटक का निषेध संस्कृत में अवश्य है परन्तु शोक पूर्णरूप से विद्यमान था। गोवर्धन ने 'आर्याशप्तसती' में जो भवभूति की प्रशंसा की है वह उल्लेखनीय है—'एतस्कृतकारुण्ये किमन्यथा रोदिति ग्रावा।' संस्कृत के शास्त्रकारों ने नाटक के दश प्रकार बताया है। 'दशरूप' में धनंजय का श्लोक है—

'नाटकं सप्रकरणं भाणः प्रहसनं डिमः।
व्यायोग समवकारौ वीथ्यंकेहामृग इति।'

परन्तु प्रायः सभी प्रकार में किसी-न-किसी रूप में दैवी सम्बन्ध है। हमारे पूर्वजों का मत था कि परलोक का ध्यान लुप्त नहीं होना चाहिये, आनन्द प्रमोद के अवसर पर भी ईश्वर की अनुकम्पा का, ईश्वर की महिमा का ज्ञान रहना चाहिये। यहाँ तक कि पापाचारी भी ईश्वर से प्रार्थना करते हैं। 'मृच्छकटिक' में शर्विलक कार्त्तिकेय की आराधना करता है।

यह हुई पुरानी बात। बर्तमान युग में ईश्वर का ध्यान यदि कभी आता है तो केवल विपत्ति में। अन्यथा उनके अस्तित्व और नास्तित्व का कोई विशेष महत्व नहीं है। मनुष्य का जीवन स्वयं इतना विस्तृत हो गया है; समाज के प्रश्न इतने गूढ़ और जटिल हो गये हैं; विचारक्षेत्र इतना निस्सीम हो गया है; शिक्षा, धर्म्म, विज्ञान, कला, सम्बन्धी समस्यायें इतनी संख्या में और इस कठिनता से उपस्थित हो गई हैं—कि आज के कवि के लिये यह असम्भव है कि वह केवल ईश्वरचिन्ता में मग्न रहे।

प्रस्तुत नाटक 'राजयोग' के लेखक आधुनिक विषयों का समावेश अपनी पुस्तकों में करते हैं। किसी को अधिकार नहीं है कि इसके कारण पुस्तक की अवलेहना करे। प्रति युग में कुछ ऐसी समस्यायें होती हैं जिनपर बहुधा शिक्षित समाज सोचा करता है। नाटक यदि समाज की सेवा का उद्देश्य रखता है तो लेखक का कर्तव्य है कि इन समस्याओं के ओर ध्यान दिलावे। एक अंग्रेजी कवि का कहना है कि नाटक के मूल सिद्धान्त नाटक के पढ़ने वाले निर्णय करते हैं। शेक्सपियर, कौंग्रीव, ड्रायडेन, मोलियर, कौल्डेरन, शेरिडन, बर्नार्डशा, गाल्सवर्दी—यदि इनके नाटकों में इनके

समय का प्रतिविम्ब मिलता है, तो क्यों न 'राजयोग' में भी हमारे देश की स्थिति न दृष्टिगोचर हो ? हमें अधिकार केवल इन प्रश्नों के पूछने का है—कथा रुचिकर है कि नहीं ? चरित्र-चित्रण में कहाँ तक सफलता हुई है ? पात्रों का वार्तालाप मनोरंजक है कि नहीं ? किसी अंश में अस्वाभाविकता तो आने नहीं पाई ? नाटक पढ़ने पर अथवा देखने पर चित्त पर क्या प्रभाव होता है ? मैं तो केवल अपनी ही रुचि के अनुकूल इन प्रश्नों का उत्तर दे सकता हूँ। सम्भव है औरों का विचार भिन्न हो—'नैको मुनिर्यस्य मतन्न भिन्नम्'। मैंने इस नाटक को ध्यान से पढ़ा है, और मेरे विचार में योग्य लेखक ने बहुत अंशों में सफलता प्राप्त की है। कहीं-कहीं तो दृश्य बहुत ही करुणाजनक है। चम्पा के चित्रण में मिश्र जी ने बड़ी कुशलता दिखाई है। यदि मुझे कोई दोष देख पड़ता है तो यह कि कहीं-कहीं पात्रों के वाक्य लम्बे हो गये हैं। अन्यथा नाटक प्रशंसनीय है और आशा है कि हिन्दी-साहित्य में इसका आदर होगा।

प्रयाग
११-४-३४

अमरनाथझा, एम० ए०
( अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग )

## पात्र....

नरेन्द्र

शत्रुसूदन

रघुवंश

गजराज

चम्पा, सिपाही, नौकर आदि ।

# राजयोग

# पहला अंक

[ रतनपुर के राजकुमार शत्रुसूदन सिंह का बँगला। यह बँगला सिविल लाइन्स में है। इसके आसपास बड़े-बड़े वकीलों, बैरिस्टरों, सरकारी नौकरों और नई रोशनी के रईसों के बँगले बने हैं। बँगला दुमंजिला; तूतिये से रँगी हुई दीवारें, पालिश से चमकते हुए सागौन के किवाड़, शीशे की खिड़कियाँ, सामने बगीचा और बगीचे के बीचोबीच सुन्दर लान सब तरह से इसकी श्रीवृद्धि कर रहे हैं। मनुष्य की आकांक्षा-निवृत्ति के लिये जिन-जिन बाहरी चीजों की ज़रूरत होती है—वे सभी इस बँगले के साथ लगी है। सामने सिमेंट की बनी चिकनी और चौड़ी सड़क, ईंटों की झाँझरदार चहारदीवारी। बँगले से निकलकर सड़क पर आने के लिये जो फाटक बना

हैं वह लान के ठीक सामने है और वहीं से बँगले की निचली तह का सबसे बड़ा कमरा किवाड़ खुले रहने पर साफ़ देख पड़ता है।

कुआर का महीना है। घाम और बादल साथ ही साथ चल रहे हैं। शाम को प्रायः चार बज रहा है। नीचे के बड़े कमरे के, जो सड़क के ठीक सामने है, तीन किवाड़ खोलकर कोई अधेड़ पुरुष दरवाज़ों के सामने बारी-बारी खड़ा होकर पीतल की छड़ में लगे हुए रंगीन पर्दों को समेट रहा है। इसका चौड़ा और ऊँचा मस्तक, ऐंठी हुई लम्बी मूछें, सिर पर जैपुरी तर्ज़ का मुरेठा, गेहुएँ रंग के चेहरे में बड़ी बड़ी सुर्ख़ आँखें—आज राणा प्रताप का ज़माना नहीं—नहीं तो इसकी मज़बूत मुट्ठी में खुली सिरोही लचकती होती। इसका नाम गजराज सिंह है। गजराज सिंह बँगले की सीढ़ी से नीचे उतरकर लान की ओर बढ़ता है। बगीचे में कई आदमी काम में लगे हैं। कोई पौधों की जड़ गोड़कर उसमें खाद डाल रहा है, कोई पानी दे रहा है। भड़कीली पोशाक में कई सिपाही बन्दूक में संगीन लगाये घूम रहे हैं।

राजकुमार शत्रुसूदन सिंह का कमरे की बगल का दरवाजा खोलकर इस कमरे में प्रवेश। कमरे की सजावट अंग्रेजी ढंग पर हुई है। फ़र्श की जगह ऊनी रंगीन कालीन बिछी है। कमरे के बीच में छोटी तिपाई और उसके चारों ओर गद्देदार कुर्सियाँ पड़ी हैं। सामने की दीवार में खूटियों की क़तार पर जानवरों के सिर और उसके नीचे भड़कदार बाज़ारू चित्र बने हैं। दीवाल के बीच में ठीक सामने घड़ी लगी है, उसमें चार बज रहा है। राजकुमार की अवस्था प्रायः तीस वर्ष की है। एकहरा, गोरा, लम्बा शरीर, नुकीली नाक, बड़े-बड़े कान, लम्बी और चमकीली आँखें, लेकिन धँसी हुई। लम्बे काले

वाल। राजकुमार अभी सो कर ऊपर से नीचे उतर रहे हैं, और इसलिये अस्तव्यस्त हैं। खद्दर की कमीज़ जिसमें गले के नीचे छाती का कुछ हिस्सा खुला देख पड़ता है, खद्दर की धोती और मखमली चट्टी पहने हैं।]

शत्रुसूदनसिंह

गजराज! [कमरे के बीचवाले दरवाज़े पर खड़ा होकर दायाँ हाथ अपने सिर पर फेरने लगते हैं]

गजराज

[घूमकर तेज़ी से उनकी ओर बढ़ता हुआ] हाँ............ सरकार.........

शत्रुसूदन गंभीर होकर कुछ सोचने लगते हैं। गजराज पास जाकर उनकी ओर देखता रहता है।

शत्रुसूदन

दीवान साहब नहीं आये न? [सिर हिलाते हैं]

गजराज

[पीछे की ओर देखकर] ना सरकार.........

शत्रुसूदन

हाँ कहो, चुप क्यों हो गये?

गजराज

[ सहमकर ] क्या कहूँ मैं ?

शत्रुसूदन

क्यों ? तुम्हारी आँखें कह रही हैं कि तुम कुछ कहना चाहते हो।

गजराज

नहीं तो सरकार···कुछ नहीं···मैं क्या··· [चुप हो जाता है]

शत्रुसूदन

[ चिढ़कर ] तुम्हारा स्वभाव भी दिन-प्रति-दिन बनता जा रहा है। तुम्हें भी मेरी नज़र बचाने की आदत पड़ गई है। जिधर देखता हूँ, सन्देह··· [ गजराज की ओर देखकर ] मनुष्य जो बात छिपाकर रखता है वह विष से भी भयंकर और छुरी से भी तेज़ होती है। समझे ? मुझे तो ऐसी आशा नहीं थी कि मैं तुम्हारे लिये भी बोझ हो जाऊँगा।

गजराज

[ भय के स्वर में ] सरकार की शपथ···जाते वक्त मालिक से मेरी भेंट नहीं हुई।

शत्रुसूदन

मेरी क़सम [ मुस्कराकर ] गजराज, 'मेरी क़सम' तुम लोगों के लिये बड़ी आसान हो गई है।

गजराज

सरकार·····[निराश और उद्विग्न होकर उनकी ओर देखता है।]

शत्रुसूदन

इस तरह क्यों देख रहे हो ? मैंने तुम्हारा कुछ छीन तो नहीं लिया ? [पीछे की ओर घूमकर और दीवार की घड़ी में देखकर] अभी नहीं आये। दो घंटे से भी ज्यादा हो रहा है, आश्चर्य है !

गजराज

हुज़ूर से कहकर नहीं गये ?

शत्रुसूदन

तुम्हारे 'सरकार' और 'हुज़ूर' के मारे तो और भी नाकों दम हो गया है। बात-बात में सरकार और हुज़ूर·· सीधे क्यों नहीं बोलते ? कभी सरकार और हुज़ूर न कहना। मुझे अच्छा नहीं लगता।

गजराज

अपने अन्नदाता को·········

शत्रुसूदन

अजी कौन किसका अन्नदाता है ? संसार स्वार्थ की धुरी पर घूम रहा है। मैं अपना काम स्वयं न कर तुमसे कराता हूँ। तुमसे सेवा लेकर अन्न देना, अन्नदाता नहीं कहा जा सकता। वह तो तुम्हारी मिहनत, तुम्हारी मज़दूरी है और तुम वह कहीं भी पा सकते हो।

गजराज

मालिक गये कब ?

शत्रुसूदन

फिर वही ग़लती। मनुष्य का मालिक और कोई नहीं हो सकता। वह तो स्वयं अपना मालिक होता है। मालिक नहीं, उन्हें दीवान साहब और मुझे राजा साहब कहा करो। हुज़ूर और सरकार कहना मत। हाँ, क्या पूछा ? ऐं दीवान साहब—······यही न ?

गजराज

जी·········

शत्रुसूदन

ऊपर सामने वाले कमरे में बातें कर रहे थे। [ दो क़दम पीछे हटकर आराम कुर्सीपर बैठते हुये ] इतने हीं में [ सड़क के किनारे फाटक की ओर हाथ उठाकर ] वहाँ फाटक पर कोई आदमी आकर खड़ा हो गया। उसकी ओर देखकर कहने लगे, कौन है···कौन है ?

गजराज आगे बढ़कर किवाड़ पकड़कर खड़ा होता है।

···जब तक मैं उधर देखूँ, पागल की तरह हाँफते हुए नीचे की ओर दौड़ पड़े···बूढ़े आदमी··· [ सिर पर हाथ रखकर ] दरवाज़े की चोट लगी; सिर थामकर बैठ गये। मैं उठकर उनकी ओर बढ़ा, लेकिन वे उठकर तेज़ी से सीढ़ी के नीचे उतर गये। पुकारता ही रह गया, लेकिन सुने कौन ? जैसे आँधी में उड़ते हुए फाटक पर पहुँच गये। ···उसके बाद [कुछ सोचकर] पता नहीं, किधर निकल गये। हाथ-पैर में दम तो है नहीं। लोग इतने दिन तक जीते क्यों रहते हैं। [ गंभीर होकर ] मालूम होता है, इनकी जगह अब मुझे किसी और को रखना पड़ेगा। इनसे तो अब काम···

गजराज

जी···[ भय और सन्देह से उसकी ओर देखता है ]

शत्रुसूदन

तुमसे राय नहीं पूछता [ उसकी ओर ध्यान से देखते हुए ] और न तो मैं उन्हें आज ही अलग कर रहा हूँ। सोच रहा हूँ...हाँ...उनकी अवस्था क्या होगी ?

गजराज

आज ही पूछा था, बोले...अस्सी साल।

शत्रुसूदन

[ विस्मय में ] अस्सी साल ? ऐं ! अच्छा अब कहो, इतना बुड्ढा आदमी...कोई उत्तरदायित्व का काम सम्हाल सकता है ? घबड़ा क्यों रहे हो ? विचार करो, शायद गद्दी पर बैठे ही बैठे किसी दिन चल बसें, तब ? [ सिर हिलाते हुए ] मैं अब उन्हें आराम देना चाहता हूँ। इसमें सन्देह नहीं, उनका शरीर··

गजराज़

बड़ी मज़बूत काठी थी सरकार...बज्र की बनी थी। मेरी उम्र के जब थे, तो अपनी आँख से देखा था [ गर्दन टेढ़ी कर ] जङ्गल में खेदा पड़ता था। तमाशा देखने के लिये बड़े सरकार मचान पर बैठ जाते थे और वे [ जैसे कुछ

याद कर रहा हो ] तलवार निकालकर, चाहे वाघ पाँच हाथ लम्वा हो या सात हाथ, तलवार के एक ही हाथ...वस एक ही हाथ में [ अपनी बाँह घुमाता है जैसे तलवार चला रहा हो ] कमर से काटकर दो टुकड़े कर देते थे। ऐसा सधा हाथ था कि पाँच वरस में तीस वाघ गिरा दिया। ऊपर चौकी पर जो खाल बिछी है...इन्होंने मारा था, जिसपर शतरंज की चौकी रखी है···वड़े सरकार उसीपर पूजा करते थे।

शत्रुसूदन

तुम्हारा मुँह खुलना चाहिये, फिर तो तुम सिंहासन-वतीसी की पुतली हो जाते हो। जिसपर शतरंज की चौकी बिछी है उसीपर वड़े सरकार पूजा करते थे, यह सव तुमसे कौन पूछता है ? क्यों ? [ कुछ सोचने की मुद्रा में ] आज सिनेमा जाना था। [ वायें हाथ से सिर का वाल ठीक करते हुए ] नरेन्द्र के गायव हो जाने से इनका दिमाग़ विगड़ गया। गया कहाँ ? इतनी खोज भी हुई। [ गम्भीर होकर ] शायद दुनिया को पार कर गया। इनके कोई दूसरा लड़का तो नहीं है न ?

गजराज

जी नहीं...पहली शादी से...हाँ पहली शादी से दो

लड़के हुए थे। दोनों मर गये। दुलहिन भी मर गईं। दूसरी शादी बड़े सरकार के बहुत कहने पर की। साठ बरस के बाद नरेन्द्र बाबू हुए थे और आज पाँच बरस से उनका पता नहीं। [ उदास होकर ] कहाँ चले गये? होते तो अब तक पता लगता···मालिक कई दिन तक कोट के उत्तर नदी में खोजते रहे।

शत्रुसूदन

फ़िर तुमने मालिक कहा?

गजराज

सरकार, आदत········

शत्रुसूदन

अच्छा तो अब सरकार भी·····बस हुजूर भी कह दो·····तुम्हारी आदत पूरी हो जाय। [ मुँह बनाकर ] सरकार·· हुज़ूर···बात-बात में···

गजराज

मैं कह रहा था, सरकार अगर उनकी ओर से आँख फेरेंगे तो वे मर जायेंगे।

शत्रुसूदन

लेकिन सरकार! आप क्या समझते हैं कि वे कभी मरेंगे नहीं? आदमी पैदा होते हैं मरने ही के लिये न? और फिर वे तो सैकड़ा पहुँच भी गये। और मैं उन्हें अलग भी करूँगा तो उनके गुजारे का प्रबन्ध कर। रियासत में ऐसा रिवाज नहीं है, नहीं तो मैं तो पुराने नौकरों को पेन्शन देना पसन्द करता। [ फाटक की ओर देखकर ] देखो''देखो''वह आ रहे हैं। मालूम होता है, अब गिरे; पैर धरती पर सीधे नहीं पड़ते। बढ़ जाओ'''''आगे बढ़ जाओ। हाथ पकड़ लो आगे बढ़कर, नहीं तो गिर पड़ेंगे। देखो''देखो, जल्दी जाओ। सम्हाल लो, नहीं तो'''''[ गजराज लान को बगल की सड़क से होकर आगे बढ़ता है। शत्रुसूदन बाहर निकलकर बँगले की बरसाती में उतर आता है। बूढ़े दीवान रघुवंश सिंह गजराज के कन्धे पर हाथ रखकर हाँफने लगते हैं। रघुवंश सिंह की सफ़ेद मूँछ, सफ़ेद दाढ़ी और सिर के सफ़ेद बाल, पूरा चार हाथ लम्बा चम्पे के रङ्ग का गोरा शरीर, राजपूती ढङ्ग की शेरवानी, पाजामा, इस बुढ़ापे में लटकती हुई सिरोही, उस बीते हुए राजपूत जीवन की याद दिलाता है, जिसकी समाधि पर टाड साहब के फूल चढ़े थे। ]

गजराज

पीठ पर लाद लूँ, सरकार'''''

रघुवंश

[ गजराज के कन्धे पर से हाथ खींचकर ] इसी हाथ से [ दायाँ हाथ ऊपर उठाकर ] शेर का शिकार करता था गज-राज ! मेरे लिये मौत नहीं है। [ स्वर काँपने लगता है ] नहीं तो यह नौबत न आती। जिसके दो बच्चे मर गये और तीसरे का आज पाँच वर्ष से पता नहीं है। क्या हुआ ? कहाँ गया ? आओ चलो। जैसा किया होगा, पा रहा हूँ। शिकायत किसकी करूँ और किस लिये ? शिकायत करने से ही अब क्या होगा ? [ सिरोही की मूँठ पकड़कर ] तबीयत चाहती है, इसे कलेजे में······फिर सोचता हूँ, दूसरे जन्म में क्या होगा ? [ बँगले की ओर बढ़ते हैं। गजराज सिर नीचेकर उनके पीछे चलता है। रघुवंश सिंह बँगले की बरसाती के भीतर घुसकर बँगले की सीढ़ी पर बैठ जाते हैं। ]

शत्रुसूदन

[ उनके पास जाकर ] चलें भीतर······

रघुवंश

[ बायें हाथ से अपनी आँख बन्द कर और दायाँ हाथ हिलाते हुए ] ठहरिये। थोड़ी देर सुस्ता लूँ। [हाँफते हुए तेजी से साँस लेने लगते हैं।]

शत्रुसूदन

[ उनके सिर की ओर ध्यान से देखते हुए ] अरे ! दीवान साहब ! आपके सिर से तो खून निकल रहा है।

रघुवंश

[ धीमे स्वर में ] होगा ।

गजराज नज़दीक आकर देखता है ।

गजराज

[ चौंककर ] खून ही तो है । [ शत्रुसूदन की ओर देखते हुए ] पानी लाऊँ ?

शत्रुसूदन

जाते क्यों नहीं ? या इतने के लिये कोई प्रस्ताव पास करना होगा ?

गजराज का प्रस्थान ।

रघुवंश

ऊपर दरवाज़े से धक्का लग गया। कहाँ जा रहे हो गजराज ? छत्री खून से नहीं डरता । [ शत्रुसूदन की ओर देखते हुए ] बुरे ज़माने में पैदा हुआ था । दिल खोलकर

खून के साथ खेल नहीं सका। दिल की बात दिल ही में रह गई।

शत्रुसूदन

अब आपको तकलीफ़ हो रही है।

रघुवंश

[ उनकी ओर देखते हुए ] कोई वश भी तो नहीं है सरकार...

शत्रुसूदन

मैं चाहता हूँ कि आपके निर्वाह का प्रबन्ध कर आपको इस काम से छुट्टी दे दूँ।

रघुवंश

लेकिन अभी नरेन्द्र का पता तो कहीं नहीं लगा। [ शत्रु-सूदन की ओर उद्वेग से देखने लगता है ] तब कैसे मुझे छुट्टी...

शत्रुसूदन

लेकिन नरेन्द्र से इससे क्या मतलब ?

रघुवंश

मेरे बाद दीवान होने का हक उसीका है।

शत्रुसूदन

जी नहीं। कोई भी योग्य आदमी दीवान हो सकता है।

रघुवंश

कोई भी दूसरा आदमी हो सकता है, दीवान? न राजकुमार! तुमको मालूम होगा, यह गद्दी पुश्तैनी है।

शत्रुसूदन

जी नहीं। इस ज़माने में कोई नौकरी पुश्तैनी नहीं होती। दुनिया अब बदल गई।

रघुवंश

[ उत्तेजित होकर उठते हुए ] तीन सौ वर्षों से यह गद्दी मेरे खान्दान में है। मेरे पास फ़रमान है—महाराज जीत सिंह का, महाराज विक्रमसिंह का, महाराजा महेन्द्रसिंह का और बड़े सरकार का। आप इसे तोड़ेंगे क्यों?

शत्रुसूदन

मैं इसे चोरी करना समझता हूँ। मैं इसे ज़रूरी नहीं समझता।

रघुवंश

क्यों आप इसे जरूरी नहीं समझते ? मेरे परदादा सामन्तराव चन्दनसिंह महाराज जीतसिंह की जान बचाने में मारे गये थे। और उसीकी यादगार में यह गद्दी उनके वंशधरों को मिली। खुद महाराज जीतसिंह ने पुश्तैनी फ़रमान दिया और उसके बाद······

शत्रुसूदन

[ हाथ उठाकर ] चुप रहिये, मैं इतिहास सुनना नहीं चाहता ······जिसमें सिद्धान्त की बुराई है······किस्सा कहने से [ कुछ सोचकर ] जो नरेन्द्र अपने बूढ़े बाप का नहीं हुआ··· जो यह नहीं सोचता, आप मर रहे हैं······या······वह रियासत की कौन-सी भलाई कर सकेगा। उसके भरोसे···

रघुवंशसिंह उत्तेजना में काँपने लगते हैं। शत्रुसूदनसिंह उनकी ओर रूखी नजर से देखते हैं। गजराज का प्रवेश। गजराज उन दोनों को उस स्थिति में देखकर सहम उठता है। लौटकर जाना चाहता है।

रघुवंश

गजराज, छोटे सरकार ने मुझे रियासत से निकाल दिया ।

शत्रुसूदन

रियासत से नहीं·····नौकरी से आपको अलग करना·····

रघुवंश

नौकरी से अलग कर देने का मतलब है रियासत से निकाल देना। जिस गद्दी पर मेरे बाप, दादा, परदादा, साठ बरस मुझे भी·····साठ बरस [ सिर हिलाकर ] साठ····· नये अफ़सर आज आते हैं—कल जाते हैं।

शत्रुसूदन

आपके गुज़ारे का प्रबन्ध मैं कर दूँगा।

रघुवंश

मेरे गुज़ारे का प्रबन्ध·····हूँ, तो आप मुझे भीख देंगे।·····मेरे बुढ़ापे पर रहम कर·····हूँ, न हुआ वह ज़माना, नहीं·····तो यह पंचानवे बरस का बुड्ढा तीन पहर के भीतर रतनपुर का राजा होता। [ राजकुमार की ओर देखकर ] समझते हो ? [ सिर हिलाकर ] नहीं····· अच्छा, अगर नरेन्द्र मिल जाय।

शत्रुसूदन

मिल जाने पर भी नहीं—मैं नरेन्द्र का विश्वास नहीं कर सकता। और पुश्तैनी नौकरी भी ठीक नहीं। मैं तो सिद्धान्त के लिये……

रघुवंश

अंग्रेजी संस्कृत तो मैंने पढ़ी नहीं। इसलिये शायद सिद्धान्त मैं न समझ सकूँ। थोड़ी फ़ारसी मौलवी से पढ़ी थी।……नरेन्द्र तो पढ़े हैं। इलाहाबाद की अंग्रेजी की सब पढ़ाई ख़तम कर चुका। बी. ए. पास करने के बाद दो वर्ष कानून पढ़ता रहा।

शत्रुसूदन

मैं भी नरेन्द्र की योग्यता मानता हूँ……लेकिन अब मैं यह रिवाज तोड़ देना चाहता हूँ।

रघुवंश

तो मैं अब नरेन्द्र की कोई फ़िक्र न करूँ।

शत्रुसूदन

क्यों? आपके लड़के हैं……आपके बुढ़ापे में……

रघुवंश

ओह लड़का और बुढ़ापे में ?···मैं उसे खोजता था अपनी ड्योढ़ी के लिये·····लेकिन जब वही चली उसकी ज़रूरत नहीं। किसी जंगल में·····किसी पहाड़ में········[ दोनों हाथों की हथेली ऊपर कर ] अब तो ज़िन्दगी भी आ गई। अच्छा शत्रुसूदन ! तो अब मैं जाऊँ न ?

शत्रुसूदन

कहाँ ?

रघुवंश

किसी जगह, जहाँ आदमी न हों। जहाँ मेरा मुँह कोई न देख सके और मैं भी किसीको न देखूँ।

गर्दन झुकाकर ऊपर देखने लगता है।

शत्रुसूदन

लेकिन मैं आपके गुज़ारे के लिये तो········

रघुवंश

[ पैर पटककर ] सावधान···गुज़ारे का नाम फिर नहीं। [ तेज़ी से सिरोही खींचकर ] यह···यह···यह···[ सिर हिलाकर ]

मेरा गुज़ारा इससे होगा···इससे । मेरा गुज़ारा इससे होगा। शत्रुसूदन ! [ वहीं धरती पर बैठकर हाँफने लगता है । ]

शत्रुसूदन

[ रघुवंश की ओर क्रोध से देखते हुए ] गजराज, देख रहे हो न ? इनका दिमाग़ कितना बिगड़ गया है। मैं अब इससे अधिक सहन नहीं कर सकता । हत्या के बल खेत खाना मेरे बरदाश्त के बाहर हो रहा है। बोलते क्यों नहीं गजराज ?

गजराज सिर नीचे कर चुपचाप खड़ा रहता है।

रघुवंश

क्या करोगे ? मुझे ज़लील करोगे···क़ैद करोगे···हाँ क़ैद करोगे···यही न···यही न···बस और क्या ? लेकिन जो बात सच है···वह···वह मिटा नहीं सकोगे। ठाकुर बिहारी सिंह की लड़की से नरेन्द्र की शादी पक्की हो चुकी थी। दोनों कालेज में सुना था साथ ही पढ़ते थे···शायद बात-चीत भी···प्रेम भी···। लेकिन तुम राजा थे। तुम्हारे हाथ में, तुम्हारी जीभ में ताक़त थी···तुमने पहली रानी के जीते हो ठाकुर साहब की लड़की से शादी कर ली। नरेन्द्र मारे

शर्म के, मारे रंज के, कहीं चला गया। तुम्हें उसका सन्देह है। मेरी गद्दी इसलिये तुम उसे नहीं दे सकते। राजपूत और सब हो सकता है, लेकिन नमकहराम और विश्वासघाती नहीं। [ हाँफते हुए ] खैर···अच्छा···अच्छा [ सिरोही म्यान में रखकर ] अच्छा तो जा रहा हूँ,—रतनपुर नहीं। दुनिया बहुत बड़ी है। साढ़े तीन हाथ धरती बहुत मिलेगी। अपनी रियासत जाकर सम्हालो या छोड़ दो। कौन जानता है, शायद रियासत के हक़ के बारे में भी पुश्तैनी बात न चलती हो। भगवान तुम्हारा कल्याण करे।

रघुवंशसिंह का प्रस्थान। गजराज भी बिना कुछ कहे-सुने उनके पीछे-पीछे चलता है। शत्रुसूदन लौटकर कमरे में आरामकुर्सी पर बैठते हैं। बँगले के फाटक के बाहर होकर रघुवंशसिंह ज्योंही सड़क पर पहुँचते हैं, गजराज बढ़कर हाथ पकड़ लेता है।

रघुवंश

क्या है रे!

गजराज

आपके साथ······

रघुवंश

कहाँ······?

गजराज

जहाँ कहीं आप चलें···। आपके साथ जंगल में······ पहाड़ पर।

रघुवंश

[ गम्भीर होकर ] मेरी तरह तुम भी नमकहरामी करोगे ?

गजराज

हे भगवान !

रघुवंश

[ जैसे होश में आकर ] क्या कहा ?

गजराज

आप नमकहरामी कर रहे हैं ?

रघुवंश

और नहीं तो क्या ? अपने राजा की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ रियासत छोड़कर जा रहा हूँ...नमकहरामी नहीं तो और क्या है ? इसी लिये न कि जहाँ दीवान की गद्दी पर रहा, किसीका मातहत बनकर नहीं रहूँगा। तीन सौ वर्षों तक मर्यादा की जो रस्सी हमारे वंश के गले में हार की तरह

रही...वही अब पैरों में बेड़ी की तरह रहेगी। मैं इसे सहन नहीं कर सकता...इसी लिये भाग रहा हूँ...दूर...दूर, जहाँ कोई न जाने कि बूढ़ा दीवान रघुवंशसिंह क्या हुआ, कहाँ गया? [ आवेश में स्वर के साथ-ही-साथ उनका सारा शरीर काँपने लगता है। ]

गजराज

मैं भी यहाँ नहीं रहूँगा। चौबीस वर्ष का पाप, चाहे यह भले ही नमकहरामी कही जाय। मेरा पाप...उसका बोझ रोज़ बढ़ता जा रहा है। मैं अब उसे सम्हाल नहीं सकता।

रघुवंश

दूर हट कुत्ते [ उसे हाथ से पीछे ठेलते हुए ] लड़की की तरह रो रहा है। किस लिये रे!...अपने राजा को छोड़-कर मेरे लिये? मेरा मोह [ सिरोही की मूठ पकड़कर ] यह आज शत्रुसूदन के गले के पार हो गई होती...लेकिन मैंने सोचा, उसकी देह में महाराज जीतसिंह का ख़ून है, जिसके लिये मेरे दादा की जान गई। किसीने पेड़ लगाया और मैं काट दूँ...इसी लिये हाथ फड़कता था, लेकिन मन कहता था, नहीं...नहीं। हाँ, कभी नहीं। ऐसा भी क्या? उसी-

को छोड़कर तू मेरे साथ चलेगा ? बोल। बोल। [ सिर हिलाकर ] बोलता क्यों नहीं रे ? तू भी अपनेको क्षत्री कहता है ? तुमसे अच्छे तो जंगल के भील···जो अपने राजा के लिये......

तेज़ी से आगे बढ़ जाता है। गजराज वहीं कुछ देर तक सन्न होकर खड़ा रहता है। इधर-उधर चारों ओर देखता है, जैसे कोई रास्ता नहीं मिलता। फिर धीरे-धीरे बँगले की ओर बढ़ता है।

शत्रुसूदन

अभी नींद नहीं खुली ? पाँच बज रहा है। सिनेमा चलना है।

बग़ल के कमरे का किवाड़ खोलकर शत्रुसूदन की स्त्री चम्पा का प्रवेश। चम्पा के वेश की सादगी, धानी रङ्ग की सादी साड़ी, पैर में कामदार जैपुरी जूता और बाँयें हाथ में रिस्ट वाच।

वाह ! मालूम हो रहा है, सेनेट हाल में परीक्षा देने जा रही हैं...[ मुस्कराकर ] क्यों ? आज नींद गहरी लगी ?

चम्पा

जी नहीं। सो नहीं रही थी। यहीं खड़ी-खड़ी सुन रही थी। बूढ़े दीवान का क्या होगा ?

शत्रुसूदन

होगा क्या ? वे इतने बूढ़े हो गये कि उनपर रियासत का काम छोड़ना [ गर्दन टेढ़ी कर चम्पा की ओर देखने लगता है ]

चम्पा

आखिर किसीको रखना तो पड़ेगा न ?

शत्रुसूदन

अभी मैंने इस विषय पर विचार नहीं किया...और न तो इस समय इस बारे में कुछ सोचना चाहता हूँ। एक ही दिन में रियासत में ग़दर नहीं मच रहा है कि मैं...

चम्पा

स्वयं चलकर क्यों नहीं देखते ?

शत्रुसूदन

तुम्हें इन सब बातों से मतलब ?······रियासत के बारे में व्यवस्था पर विचार करने का काम स्त्री का नहीं है। [ उसकी ओर देखते हुए ] तुम्हारा काम है मेरी कल्पना को रँगकर सहस्रमुखी बना देना। दिनभर के काम से थक

कर जब मैं तुम्हारे पास आऊँ, अपने शीतल स्पर्श से मेरी थकावट को मिटा देना। जब मैं ऊब उठूँ जीवन से······ अपने प्रेम का अमृत पिलाकर मुझे अमर बना देना। तुम अपना काम करो और मैं अपना······

चम्पा

भ्रम और मिथ्या की भाषा छोड़कर यदि आप यों कहें कि मेरा काम है रात को आपकी सेज पर और दिन को [ कुछ सोचकर ] कठपुतली की तरह आपके इशारे पर ······आपकी मर्ज़ी पर अपनेको छोड़ देना······अपने शरीर को······अपने हृदय को और अपनी आत्मा को······

उठकर जाना चाहती है।

शत्रुसूदन

[ उठकर उसका हाथ पकड़ते हुए ] रूठ गईं ? इस समय मेरा चित्त ठिकाने नहीं है। तुमको इतना निठुर नहीं होना चाहिये। मेरा भी मनुष्य का हृदय है और वह भी दुःख से जल रहा है। अगर मैं समझता······तुम मेरी स्त्री हो।

चम्पा

[ रुककर ] लेकिन आप जो चाहते हैं—उपदेश से शायद वह पूरा भी नहीं हो सकता। सती स्त्री के बारे में शास्त्रों की व्यवस्था मैं खूब जानती हूँ। उससे अधिक उपदेश आप नहीं दे सकते। लेकिन यदि मैं उसके योग्य हूँ तब तो। यह तो जो आप देख रहे हैं—मेरा अपना भूत.....

शत्रुसूदन

तुम्हारा भूत ?

चम्पा

जी हाँ—मेरा भूत। केवल मेरा भूत और कुछ नहीं। केवल हँस देने से सब कुछ भूल नहीं सकता।

शत्रुसूदन

अच्छा चलो सिनेमा देखने। [ दीवार पर घड़ी की ओर देखता है ]

चम्पा

कालेज के दिनों में मुझे इसका रोग था.....लेकिन अब तो तबीयत भर गई।

शत्रुसूदन

तुमने टाकीज़ नहीं देखी। बड़ी अच्छी तस्वीरें आई हैं।

चम्पा

हाँ, विज्ञापन देखा है। 'सेंट-परसेंट नाचने-गानेवाली तस्वीर'। लेकिन जीवन में सेंट-परसेंट नाच और गाना हो तब तो? [ सिर हिलाकर ] गँवारों को भड़काने के लिये, उन्हें पागल करने के लिये, कला के नाम पर यह व्यभिचार चल रहा है। स्वाभाविक मनुष्य की बोली सुन लेने·····समझ लेने के बाद तस्वीरों की बोली में कोई रस नहीं रह जाता। मैं तो चाहती हूँ, कोई मुझे मनुष्य का हृदय, उसकी आत्मा, दिखला देता। उसकी गन्दगी और उसका तर्क तो बहुत देख चुकी। इन चीज़ों से तबीयत ऊब गई है।

शत्रुसूदन

[ सोचने की मुद्रा में ] अच्छा तो तुम अपनेको सती स्त्री नहीं समझतीं?

चम्पा

[ रूखे स्वर में ] मैं अपनेको धोखा नहीं दूँगी। मैं

अपना हृदय जानती हूँ—उसमें कितना विकार है। कभी.....हाँ, कभी नहीं। मैं उस आसन की कल्पना करने की धृष्टता नहीं कर सकती।

शत्रुसूदन

तुम्हारे लिये मैं सब कुछ छोड़कर यहाँ पड़ा हूँ...तुम जानती हो। इतने पर भी यदि तुम्हारा स्वभाव......

चम्पा

मेरे लिये ? [ कई वार सिर हिलाकर ] हूँ, मेरे लिये ? हर्गिज़ नहीं...अपने लिये। बड़ी रानी की झिड़की से डरकर......उनके सतीत्व के तेज से झुलसकर और उससे भी भयंकर......

शत्रुसूदन

वह क्या ?

चम्पा

वही नरेन्द्र के विरक्त होकर निकल जाने की कहानी। पाँच वर्ष हो गये, [ गम्भीर होकर ] पता नहीं। मरना-जीना कोई नहीं जानता, लेकिन सन्देह सब किसीको है कि उन्होंने आत्म-हत्या कर ली—नहीं तो क्या अब तक पता

न चलता। अगर आपने पिताजी पर दबाव डालकर मुझसे शादी न कर ली होतीं, तो बूढ़े रघुवंश की दुनिया न बिगड़ती। कहीं इसी आवेश में वे भी अपना जीवन न छोड़ बैठें।

शत्रुसूदन

तुम नरेन्द्र को अब भी प्यार करती हो ?

चम्पा

इसका उत्तर तो मैं न दूँगी।

शत्रुसूदन

अच्छा, अगर तुम्हें मुझमें और नरेन्द्र में...हम दोनों में किसी एक को ज़हर देना हो तो किसको ज़हर दोगी ?

चम्पा

[ निस्संकोच स्वर में ] नरेन्द्र को।

शत्रुसूदन

क्यों ?

चम्पा

क्योंकि ऐसी ही शास्त्र की व्यवस्था है।

शत्रुसूदन

अच्छा तो तुम शास्त्र की व्यवस्था भी मानती हो ?

चम्पा

मैं उसे तोड़ने की आवश्यकता नहीं समझती।

शत्रुसूदन

ग्रेजुएट होने पर भी तुम्हारा इसमें विश्वास है ?

चम्पा

ग्रेजुएट होने से कोई स्वर्ग की सीढ़ी नहीं मिल जाती। वही हृदय रहता है और उसके विकार भी वही...कभी-कभी तो बढ़ जाते हैं। बुराई कौशल हो उठती है।

शत्रुसूदन

शिक्षा से अन्धविश्वास मिट जाते हैं।

चम्पा

शिक्षा से परख भी आ जाती है। किसी बड़े सिद्धान्त की रक्षा में यदि व्यक्ति का सर्वनाश भी हो जाय, तो कोई बात नहीं। शास्त्रों की मर्यादा और मेरे मन में जहाँ-कहीं द्वन्द्व चलता है, मैं सदैव अपने हृदय को लात मारती हूँ।

गम्भीर होकर कुछ सोचने लगती है।

शत्रुसूदन

[ गम्भीर होकर ] मालूम होता है, मैं भी कुछ सोचने लगूँगा।

चम्पा

लेकिन इससे आपका कोई उपकार नहीं होगा। सोचने के लिये तो आप बनाये नहीं गये थे। आप जितना ही सोचेंगे—संसार की विभीषिका आपके सामने और भयंकर होती जायेगी। आप सम्हाल नहीं सकेंगे। संसार में जो कुछ भी सुन्दर और उपयोगी है, सब आपके लिये है...इन चीज़ों का सञ्चय करते चलिये। आपका जीवन इसी लिये है—केवल इसी लिये।

शत्रुसूदन

यही क्यों?

चम्पा

इस लिये कि आप सहिष्णु नहीं हैं। आप संसार को केवल अपनी ही दृष्टि से देखते हैं। आपका ही माप-दंड सही है—यह धारणा आप छोड़ नहीं सकते।

शत्रुसूदन

[विरक्त होकर] तो तुम मुझे 'आप' कहोगी...'तुम' नहीं... क्यों ?

उसकी ओर एकटक देखने लगता है।

चम्पा

स्त्री के लिये पति ईश्वर है। आप नहीं जानते ? सधवा स्त्री के लिये तीर्थ और व्रत शास्त्रों में वर्जित है। पति ईश्वर है...पति भगवान है। मैं आपको ईश्वर, भगवान, जो कुछ है—सब। आप मेरे मुँह से 'तुम' सुनने के लिये क्यों इस तरह लालायित हैं ?

शत्रुसूदन

पता नहीं क्यों, मेरा हृदय चाहता है।

चम्पा

लेकिन हृदय जो कुछ चाहता है, सब अच्छा नहीं। मनुष्य का सबसे बड़ा नरक अगर कहीं है, तो बस यही हृदय है। इसकी चाह आज इस ओर है तो कल उस ओर...और इसीमें मनुष्य की सारी ज़िन्दगी बीत जाती है। वह अपनी सीमा के बाहर कभी देख नहीं सकता।

उसका सारा जीवन अपना कारागार सजाने में बीत जाता है।

शत्रुसूदन बायें हाथ से अपनी आँखें बन्द कर आरामकुर्सी पर बैठ जाता है। चम्पा उसके समीप जाकर खड़ी होती है।

चम्पा

[ शत्रुसूदन के सिर पर हाथ रखकर ] आप किस चिंता में पड़ गये ? कहिये, क्या आज्ञा है ? मुझे सब स्वीकार है।

शत्रुसूदन

[ उसी तरह आँखें बन्द किये ] नहीं चम्पा......

चम्पा थोड़ी देर चुपचाप खड़ी रहती है। कभी शत्रुसूदन की ओर देखती है तो कभी बँगले के बाहर लान की ओर—सड़क की ओर। गजराज सिर नीचा किये चुपचाप लान में बैठा है।

चम्पा

[ शत्रुसूदन के सिर पर हाथ रख कर घड़ी की ओर देखती है ] छः बज रहा है। चलिये चलें सिनेमा देखने।

शत्रुसूदन

[ उठकर ] नहीं, आज नहीं...या शायद कभी नहीं।

शत्रुसूदन बाहर निकलकर लान की ओर बढ़ते हैं। चम्पा वहीं खड़ी-खड़ी जैसे कुछ सोचने लगती है।

शत्रुसूदन

गजराज ! [ गजराज उनकी ओर देखता है, उसकी आँखों से आँसू गिर रहे हैं ] तुम रो रहे हो पुरुष होकर ?

गजराज

पापी जो हूँ सरकार !

शत्रुसूदन

पापी ? [ बगीचे में काम करनेवालों से ] तुम लोग अब जाकर आराम करो। अँधेरा हो चला, नित्य तुम लोगों का काम बन्द कराना पड़ता है—तुम लोगों पर छोड़ दिया जाय तो शायद तुम लोग रात-भर काम करते रहोगे। [ कलाई की घड़ी देखकर ] एक घंटा पहले तुम लोगों को काम छोड़ देना चाहिये था। [ काम करनेवाले उठते हैं और धीरे-धीरे बँगले के पीछे निकल जाते हैं। शत्रुसूदन गजराज की ओर देखता है। ]

गजराज

जी हाँ।

शत्रुसूदन

तुम पापी ?

गजराज

ऐसा पापी, जो धरती के पर्दे पर खोजने पर भी न मिले। मेरा पाप! मालिक अगर कहीं डूब मरे तो मेरा पाप...मेरे ही पाप से नरेन्द्र बाबू गये—आज मालिक भी चले गये और शायद किसी दिन दुनिया चली जायेगी।

शत्रुसूदन

पागल! कैसा पाप?

गजराज

जिस पाप से आपको भी चैन नहीं है। लेकिन मैं बतला नहीं सकता।

गजराज का प्रस्थान।

शत्रुसूदन विस्मय से गजराज की ओर देखते हैं। फिर वहीं इधर-उधर लान पर टहलने लगते हैं। शाम हो रही है। डूबते हुए सूरज की लाली पेड़ों के पत्तों पर और आकाश पर देख पड़ती है। शत्रुसूदन एकटक ऊपर आकाश की ओर देखने लगते हैं। नरेन्द्र सड़क के किनारे बँगले के फाटक पर आकर खड़ा होता है। रेशमी कुरता, रेशमी किनारे की एड़ी तक धोती, कामदार जूता, बायें कन्धे पर चायना सिल्क की अलफी समेट कर रक्खी हुई, जो कि यों देखने पर चदरे-सी मालूम हो रही है। दाढ़ी-मूँछ सफाई से बनी हुई। सिर पर बड़े-बड़े बाल, जो पीछे की ओर घूम पड़े हैं। भरा

हुआ कान्तिमान चेहरा। उसकी आँखें कभी तो शत्रुसूदन की ओर घूमती हैं—तो कभी ठीक बँगले के नीचे के बड़े कमरे में चली जाती हैं, जहाँ चम्पा आरामकुर्सी पर बैठी हुई चिन्ता कर रही है। नरेन्द्र कई बार पान की पीक सड़क पर थूकता है। उसके ओठ पर पान का गाढ़ा रंग चढ़ गया है।

शत्रुसूदन का ध्यान भंग होता है। गहरी साँस खींचकर वह सड़क की ओर देखता है। नरेन्द्र से उसकी चार आँखें होती हैं। नरेन्द्र की आँखें उस क्षण चमक उठती हैं और वह झुककर पान की पीक थूकने लगता है। शत्रुसूदन सड़क की ओर बढ़ता है। नरेन्द्र इस समय कमरे में बैठी हुई चम्पा की ओर देख रहा है।

**शत्रुसूदन**

[ नरेन्द्र के पास पहुँचकर ] **किसे देख रहे हैं महोदय ?**

**नरेन्द्र**

**किसीको नहीं।**

नरेन्द्र की ओर इस तरह देखता है—जैसे सिंह देखता है अपने शिकार की ओर। शत्रुसूदन क्षण-भर के लिये स्तम्भित हो उठते हैं।

**शत्रुसूदन**

**आपको जाना कहाँ है ?**

**नरेन्द्र**

[ कुछ सोचते हुए ] **क्या कहा ?**

शत्रुसूदन

[ उद्विग्न होकर ] मैं पूछता हूँ, आप कौन हैं ? क्या चाहते हैं ? आपको कहाँ जाना है ?

नरेन्द्र

[ रूखे स्वर में ] यह सब हमारे सम्प्रदाय में नहीं बतलाया जाता । [ कन्धे पर से अलफ़ी उठाकर झटकारता है । शत्रुसूदन चुपचाप उसकी ओर देखते रहते हैं । अलफ़ी के हट जाने से नरेन्द्र के बायें कन्धे में लटकती हुई मखमली म्यान के भीतर लम्बी कटार देख पड़ती है । शत्रुसूदन मन्त्रमुग्ध की तरह सब देखता हैं । नरेन्द्र अलफ़ी पहन लेता है ] समझे मेरा सम्प्रदाय ? मैंने हठयोग की साधना समाप्त कर दी है—इन दिनों राजयोग का अभ्यास कर रहा हूँ । उसके बाद कर्मयोग...और तब ज्ञानयोग । [ उसकी आँखें इतनी तेजी के साथ चमकती हैं कि शत्रुसूदन बीन से प्रभावित साँप की तरह हो जाता है और एकटक उसकी ओर देखने लगता है] इस तरह मत देखो, नहीं तो मेरी आँखों से बेहोश होकर गिर पड़ोगे । योगियों के लिये अपना परिचय बतलाना वर्जित है । इसीलिये मैंने कहा कि यह सब हमारे सम्प्रदाय में नहीं बतलाया जाता ।

शत्रुसूदन

[ जैसे कुछ सोचकर ] मैंने कई बार आपको भिन्न-भिन्न वेश में यहाँ खड़े होते देखा है।

नरेन्द्र

हाँ, सही है। राजयोग की परिपाटी के अनुसार मुझे दिन में तीन वार कपड़े बदलने पड़ते हैं। मैं जब कभी इधर से निकलता हूँ, इस जगह थोड़ी देर के लिये खड़ा हो जाता हूँ। [ बँगले की ओर हाथ उठाकर ] जिनका इतना वैभव है—वे बड़े दुखी हैं। सुख के लिये ही इतना सामान किया गया है। यह आलीशान बँगला; इसके भीतर की मेज़, कुर्सियाँ, पलँग, मसहरियाँ, यह बगीचा, लान; लेकिन तब भी इसके भीतर के रहनेवाले बड़े दुखी, हाँ बड़े दुखी··· इन्हीं की दशा पर विचार करने के लिये मैं कभी-कभी खड़ा हो जाया करता हूँ। योगी जगत् का अनुभव यों ही दूर से करता है···समीप से नहीं, इसमें लिप्त होकर नहीं।

शत्रुसूदन

आप यहीं शहर में रहते हैं ?

नरेन्द्र

मैंने तुमसे कह तो दिया कि योगी के विषय में इस तरह की पूछताछ अच्छी नहीं। तुम्हारा ही नाम राजकुमार शत्रुसूदनसिंह है? [ अलफ़ी की जेब से चाँदी का पनडब्बा निकालकर पान खाते हुए, फिर जेब में कुछ टटोलते हुए ] उँह, पता नहीं, सुर्ती की डिबिया कहाँ गई। [ सुर्ती की डिबिया, जो कि सोने की बनी है, निकालकर खोलता है—उसकी सुगन्ध हवा में मिल जाती है। शत्रुसूदन एक गहरी साँस लेकर सुगन्ध का आनन्द लेता है ] [मुस्कराकर] राजकुमार, यह सुगन्ध योगी के अंश की है—तुम्हारे अंश की नहीं, लेकिन तुमने ही जैसे हर तरफ़ से योगी की चीज़ को अपनी बनाने का संकल्प कर लिया है। [ गम्भीर होकर कुछ सोचने लगता है। राजकुमार चुपचाप सब कुछ भूलकर उसके मुँह की ओर देखने लगता है। ]

हाँ, तो बतलाया नहीं। तुम्हारा ही नाम राजकुमार शत्रुसूदनसिंह है?

शत्रुसूदन

जी हाँ...लेकिन...आपको कैसे...मालूम...

नरेन्द्र

फिर वही प्रश्न? मैं जो पूछता हूँ, उसका जवाब दो।

मुझसे कुछ न पूछो। तुम्हारे लिये जो उपयोगी होगा, मैं स्वयं कह दूँगा। मेरी आँखें तुम देख रहे हो?

शत्रुसूदन

जी हाँ...कितनी चमक है!

नरेन्द्र

अच्छा, तो मेरी आँखों में चमक है? अब देखो, [ एकाएक सिर को पीछे फेंकता है ] देख रहे हो मेरी आँखें?

शत्रुसूदन

जी नहीं। आँखों की जगह केवल गड्ढे देख पड़ते हैं।

नरेन्द्र

[ मुस्कराकर ] इसी तरह अन्धा बनकर मैं हिमालय पार कर गया। जहाँ पासपोर्ट की जरूरत पड़ती थी...मैं इसी तरह अन्धा हो जाता था। इस तरह मैं तिब्बत के पहाड़ों और जङ्गलों में घूमता रहा। [ मुस्कराने लगता है ] योगी तो शेर को वश में कर लेता है और तुम मनुष्य को अपने इच्छानुसार नहीं चला सकते?

शत्रुसूदन

बड़ी कृपा हो यदि भीतर चलें। आपसे बहुत कुछ सुनने को जी चाहता है।

नरेन्द्र

किसी दूसरे दिन; सुखी रहो। [ गाना चाहता है ]

शत्रुसूदन

महात्मन्! हम लोग सचमुच दुखी हैं। आपके चलने से...मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिये।

नरेन्द्र

अच्छा, चलो।

नरेन्द्र फाटक के भीतर प्रवेश कर बँगले की ओर बढ़ता है। उसके पीछे शत्रुसूदन है। अँधेरा हो रहा है। गजराज बँगले के बरामदे और कमरे में बिजली की रोशनी जलाता है। चम्पा उसी तरह कुर्सी पर निश्चेष्ट बैठी है। नरेन्द्र कमरे में प्रवेश करता है। चम्पा उसे देखकर तेज़ी से भीतर चली जाती है। नरेन्द्र भीतर पहुँचकर कुर्सी पर बैठता है। राजकुमार उसकी कुर्सी के पास खड़ा होता है।

नरेन्द्र

[ राजकुमार का हाथ पकड़कर बैठने का संकेत करते हुए ] बैठिये।

शत्रुसूदन संकोच के साथ कुर्सी पर बैठता है।

गजराज

[ नरेन्द्र का पैर छूकर ] महाराज !

नरेन्द्र

सुखी रहो ।

शत्रुसूदन

गजराज, स्वामीजी को जलपान कराओ ।

गजराज का प्रस्थान ।

नरेन्द्र

नहीं...नहीं, तुम जानते हो, मैं राजयोग की साधना कर रहा हूँ—तुम्हारे यहाँ का अन्न-जल स्वीकार नहीं कर सकता । तुम मेरे सबसे बड़े प्रतिद्वन्द्वी हो ।

शत्रुसूदन

[ संकोच से ] यह कैसा महात्मन् ?

नरेन्द्र

इसलिये कि तुम राजा हो और मैं राजयोग की साधना कर रहा हूँ । इसलिये तुम मेरे सबसे बड़े प्रतिद्वन्द्वी हो । [ कुर्सी के इधर-उधर चारों ओर देखकर कमरे में फर्श की जगह जो

रंगीन कालीन बिछा हुआ है, उसीपर पान की पीक थूक देता है। शत्रुसूदन उद्विग्न हो उठता है। ] राजकुमार, [ मुस्कराते हुए ] उद्विग्न क्यों हो उठे? यहाँ पीकदान नहीं था, इस कारण बाध्य होकर मुझे कालीन पर थूकना पड़ा। अगर मैं इसके लिये उठकर बाहर जाता तो मेरी राजयोग की साधना भंग हो जाती। हूँ, तो तुम मेरे सबसे बड़े प्रतिद्वन्द्वी हो न?

शत्रुसूदन

आप यह बार-बार क्यों कह रहे हैं?

नरेन्द्र

क्योंकि यही सत्य है। तुम मेरे सबसे बड़े प्रतिद्वन्द्वी हो। तुम नहीं जानते, लेकिन मैं जानता हूँ। क्यों, हो न? [ हँसने लगता है ]

अच्छा तो महोदय, आप मेरे सबसे बड़े प्रतिद्वन्द्वी हैं, क्यों? [ अलफ़ी के नीचे से खुली कटार निकालता है। शत्रुसूदन की ओर लक्ष्य कर उसे कई बार हिलाता है। शत्रुसूदन भय और सन्देह से हिल उठता है। ] डर रहे हो? अपने प्रतिद्वन्द्वी से डरना चाहिये। [ राजकुमार नीचे की ओर देखने लगता है। नरेन्द्र अपनी कटार उसके गले पर रख देता है। ]

तेज़ी से चम्पा का प्रवेश।

नरेन्द्र

[ कटार उठाकर चम्पा की ओर देखते हुए ] आप इस तरह घबड़ा क्यों उठीं ? मैं हत्यारा नहीं हूँ । मैं तो केवल साधक हूँ । राजयोगी की कटार राजा के गले पर···यही तो साधना है, लेकिन हत्या करने के लिये नहीं, जीवन-दान के लिये । राजकुमार को आज नया जीवन मिला है ।

शत्रुसूदन उसी तरह सिर नीचे की ओर किये है । चम्पा पहले तो क्रोध से, फिर विस्मय और उद्वेग से, नरेन्द्र की ओर देखती है ।



# दूसरा अंक



गजराज उसी कमरे में कुर्सियों को उठाकर एक ओर दीवार से लगाकर रख रहा है। कभी-कभी रुककर कमरे के ठीक बीच में खड़ा होकर बाहर, बँगले के बाहर, लान की ओर और सड़क की ओर देख रहा है, जैसे किसीकी प्रतीक्षा में हो। बँगले के सामने जो कुछ भी देख पड़ता है, पूर्णमासी की रात होने के कारण चाँदनी में डूबा हुआ-सा है।

चम्पा का प्रवेश।

चम्पा

[ कमरे को ध्यान से देखकर ] क्या कर रहे हो जी ? कुर्सियों को उधर क्यों कर दिया ? कुछ-न-कुछ करना

चाहिये। क्यों? यही न? जब जो मन में आ गया, करने लगे। अगर कोई आ जाय, तो इस कुर्सियों की दूकान को देखकर क्या कहेगा? [आगे बढ़कर] सभी कुर्सियाँ एक सीध में [सिर कई बार इधर-उधर घुमाती हुई]; कहीं भी कोई कुर्सी न तो एक अंगुल आगे और न एक अंगुल पीछे... कुर्सियों की एक सीधी रेखा और उनके बीच में बराबर...हाँ, सब जगह बराबर अन्तर। [गजराज की ओर ध्यान से देखती हुई] तुम रेखागणित पढ़े हो?

[गजराज ऐसी मुद्रा बनाता है जिससे साफ़ मालूम हो रहा है कि चम्पा की बात न तो उसकी समझ में आई और न तो वह समझना ही चाहता है। खड़ा-खड़ा वह केवल कुर्सियों की ओर देखता रहता है] बोलते क्यों नहीं?

गजराज

क्या बोलूँ? कोई कुर्सी टूटी तो नहीं है।

चम्पा

कौन कहता है कि टूटी है—मैंने तो नहीं कहा।

गजराज

तब किस लिये मैं पचास वर्ष के बाद पढ़ने जाऊँ? कुर्सी बैठने से नहीं टूटती है और रखने से टूट जायेगी?

चम्पा

फिर वही बात। टूटने को तो मैंने नहीं कहा!

गजराज

तब क्या पढ़ने को कहा?

चम्पा

[ मुस्कराती हुई ] रेखागणित...रेखागणित...समझे?

गजराज

हाँ...

चम्पा

क्या? कहो तो सुनूँ।

गजराज

[ चम्पा की ओर देखते हुए ] रेखागनित...रेखागनित...रेखा...[ सोचकर ] हाँ...गनित...रेखागनित...

चम्पा

हैं...हैं...क्या कह रहे हो?

गजराज

पढ़ तो रहा हूँ। जैसे मदरसे में मुन्सी लोग पढ़ाते हैं।

चम्पा

तुम तो रेखागनित-रेखागनित रट रहे हो!

गजराज

तो मुन्सी लोग तो ऐसे ही पढ़ाते हैं। सब लड़के एक कतार में खड़े हो जाते हैं और [ हाथ हिलाकर ] छड़ी लेकर मुन्सीजी कुर्सी पर बैठ जाते हैं। एक ही बात [सिर हिलाकर] इस तरह सभी लड़के ज़ोर-ज़ोर से कहते हैं—जहाँ कोई चुप हुआ कि मुन्सीजी की छड़ी—वही हरी नागिन लपलप करती हुई उसकी हथेली पर और फिर पीठ पर सनासन पड़ने लगी। मैंने पढ़ना देखा है और उसी तरह पढ़ रहा हूँ।

चम्पा

नहीं···तुमने और पढ़ना भी देखा है। उस बार बाबू-जी के साथ तुम कालेज में गये थे—जहाँ मैं पढ़ रही थी।

गजराज

कहाँ ? मुझे अच्छी तरह याद है। आप नहीं पढ़ रही थीं। नरेन्द्र बाबू भी नहीं पढ़ रहे थे। पढ़ तो रहे थे मास्टर साहब। कभी-कभी चश्मा हटाकर आप लोगों की ओर देखा करते थे। और सब लड़कियों के साथ आप आगे की कतार में दाईं ओर बैठी थीं। मुझे तो ऐसा मालूम हो रहा था कि मास्टर साहब की आँख फोड़ दूँ। बड़े घराने की लड़की की ओर इस तरह से देखना...मैंने तो ठाकुर साहब से कहा था। लड़के-लड़की सब एक साथ बैठे थे, मैं तो मारे लाज के वहाँ से हटकर दूसरी ओर चला गया। उसके बाद नरेन्द्र बाबू ने मुझे बहुत समझाया कि एक साथ पढ़ने में कोई बुराई नहीं है—लेकिन मेरे मन में यह बात नहीं जमी।

चम्पा

[ गंभीर होकर ] तुमसे मैंने कई बार कहा।

गजराज

[ जैसे कुछ याद कर ] याद नहीं आया। अब कभी नहीं कहूँगा। नरेन्द्र बाबू का नाम कभी नहीं लूँगा। दुर्गा माई की दुहाई! अब कभी नहीं—कभी नहीं।

चम्पा

[ बात बदलने के अभिप्राय से ] कुर्सियों को उठाकर वहाँ क्यों रख दिया ? इस तरह से तो कुर्सियाँ सिर्फ दूकान में रखी जाती हैं—किसी बड़े आदमी के कमरे में नहीं ।

गजराज

[ कमरे के बीच में खड़ा होकर ] यहाँ मसहरियाँ पड़ेंगी ।

चम्पा

[ विस्मय से ] किसके लिये ? इस गर्मी में ।

गजराज

सरकार के लिये और स्वामीजी के लिये ।

चम्पा

[ सोचकर ] सरकार के लिये भी यहीं ?

गजराज

मुझे ऐसा ही कहा गया है !

चम्पा

किसने कहा ?

गजराज

स्वामीजी ने।

चम्पा

ख़ैर, स्वामीजी के लिये प्रबन्ध कर दो; लेकिन उनके··

गजराज

स्वामीजी ने उनके लिये भी कहा है, उनके सामने ही और उन्होंने भी मान लिया।

चम्पा

उन्होंने भी मान लिया इस गरमी में यहाँ सोना ?

गजराज

[ छत में लगे हुए पंखे की ओर दिखला कर ] बिजली का पंखा है। रात-भर चलता रहेगा।

चम्पा

एक बार और रात-भर पंखा चला था—आठ दिन तक चारपाई नहीं छूटी। डाक्टर ने कहा था, पंखे का असर पड़ गया। कमज़ोर आदमी को बहुत बचकर रहना चाहिये।

है, स्वर्ग-नरक लोगों को ठगने के लिये ब्राह्मणों ने बनाया है, कर्मकांड बुद्धितत्त्व के प्रतिकूल है। रियासत में पुश्तैनी नौकरी न रहे। यह बात सिद्धान्त के प्रतिकूल है। जो कुछ हो, नया हो, विलायत की नक़ल हो! घर पर राष्ट्रवादी बनने की नीयत से खद्दर पहन लेते हैं। साहब लोगों से मिलने के समय विलायती सूटकेस का ताला खुल जाता है—यह सब होते हुए भी तुम्हारे सरकार हृदय और मस्तिष्क के बच्चे हैं। कौतूहल या चमत्कार की कोई भी चीज़ उन्हें वश में कर लेती है। गंगाजल, चन्दन और प्राणायाम का नाम सुनते ही मुस्करा पड़ते हैं। शंख की ध्वनि इतनी कर्कश होती है कि अनायास कानों में उँगलियाँ [दोनों कानों में दोनों हाथ की कनिष्ठिका उँगली डालती हैं] और नाक सिकुड़कर एक अंगुल ऊपर उठ जाती है। सब-से बड़ा महात्मा या तपस्वी वह है, जो जादू जानता है, जो उनके अबोध हृदय को उत्तेजित कर उसकी बागडोर अपने हाथ में ले सकता है। [वहीं फर्श पर बैठ जाती है]

गजराज

[तेज़ी से एक कुर्सी उठाकर उसके पास रखते हुए] कुर्सी पर सरकार!

चम्पा

उन्होंने तुमको मना किया है न कि किसीको 'सरकार' न कहो ?

गजराज

हाँ.........

चम्पा

तब ?

गजराज

बारह बरस की उमर से दरबार में नौकरी कर रहा हूँ। चौबीस बरस की आदत अब छूट नहीं सकती। मैंने कोशिश करके देख लिया। मुझसे न हो सकेगा। मैं क्या करूँ ? मुझे तो रतनपुर में कोई काम मिल जाता और यहाँ कोई इस ज़माने का आदमी रखा जाता। जान मुसीबत में पड़ गई है। [ घबरा उठता है ]

चम्पा

गजराज, मैं तुम्हें कितना मानती हूँ, तुम नहीं जानते।

गजराज

[ भर्राई हुई आवाज़ में ] जानता क्यों नहीं ? उस बार मुझे बुख़ार आया था, आपने बराबर अपने हाथ से मुझे दवा पिलाई। वह नेकी मैं भूल नहीं सकता।

चम्पा

इतना ही नहीं जी। तुम्हारे साथ रहने से बाबूजी का मरना मुझे नहीं मालूम होता—मुझे मालूम होता है कि मैं उनके साथ...

गजराज सिहर उठता है। उसका शरीर गनगना कर काँप जाता है। उसका मुख पहले तो लाल हो उठता है, फिर एकाएक पीला हो जाता है और घबराई हुई मुद्रा में बाहर निकल जाता है। चम्पा विस्मय से उसकी ओर देखती हुई उसके पीछे चल पड़ती है। गज़राज सामने लान से होकर बढ़ता है। चम्पा झपटकर उसका हाथ पकड़ लेती है।

चम्पा

तुम्हें हो क्या गया ? इस तरह भागे कहाँ जा रहे हो ?

गजराज

अभी नहीं। अभी नहीं। नहीं···नहीं। बतला नहीं सकता। नहीं। छोड़ दीजिये। छोड़ दीजिये, चौबीस बरस

के बाद। पाप का फल मिलता है...पिंड नहीं छूटता। मरना था मुझे, मर गये ठाकुर साहब।

चम्पा

[ डाँटकर ] चुप रहो। क्या बक रहे हो? तबीयत अच्छी नहीं है, तो जाकर सो रहो। कौन कहता है कि तुमने पाप किया? मैंने तो यह कुछ नहीं कहा, और क्या बतलाना चाहते हो? यह भी मैं नहीं चाहती कि बतलाओ। रहते-रहते हो, विक्षुब्ध हो उठते हो।

गजराज

[ सम्हलकर ] मुझसे कुछ पूछेंगी नहीं न?

चम्पा

मैं नहीं समझती।

गजराज

कह दीजिये कि नहीं पूछेंगी।

चम्पा

सावधान होकर विचार करो, बिना पूछे कैसे चलेगा?

गजराज

बस, इस समय मैं जो कहूँ, सुन लीजिये। आगे कुछ न पूछिये। मैं कुछ कहना चाहता हूँ।

चम्पा

अच्छा, कहो !

गजराज

मुझसे ठाकुर साहब और दुलहिनजी के बारे में कोई बात न कहा करें।

चम्पा

दुलहिन कौन ? अम्मा ?

गजराज

हाँ...वहीं...वही। उन्हीं के बारे में...उन्हीं के।

चम्पा

क्यों ?



गजराज

इसीका जवाब तो मैं नहीं दे सकता और इसी लिये भाग रहा हूँ, जिसमें कि फिर यह अवसर न पड़े।

चम्पा

हूँ...उनके मरने का दुःख तुम्हें इतना अधिक है कि तुम उनकी चर्चा भी नहीं सुन सकते ? लेकिन संसार इतना भावुक नहीं है गजराज !

गजराज

संसार के बारे में भी मैं बहुत नहीं जानता। और उनके मरने का भी मुझे दुःख नहीं। मरना तो सबको है। उससे तो कोई बचता नहीं। उनके मरने का तो मुझे सुख है, दुःख नहीं। लेकिन...

चम्पा

लेकिन...हाँ...[ उसकी ओर देखने लगती हैं ]

गजराज

मालिक अगर डूब मरे तो वह पाप मेरे ही सिर...

चम्पा

मालिक कौन...दीवान साहब ? [ गजराज सिर हिलाकर 'हाँ' का संकेत करता है ] अच्छा तो अगर वह डूब मरे तो उसका पाप तुम्हारे सरकार के सिर...तुम्हारे क्यों ?

गजराज

यही तो...मेरे ही सिर...मैं जानता हूँ। कह नहीं सकता। बस दो घड़ी में सब कुछ...चौबीस बरस बीत गये, लेकिन वह आग नहीं बुझी; अब तो मेरे मरने ही पर... [ चम्पा की ओर देखकर ] जाओ रानी ! मुझे छोड़ दो...तुमको अब वह बात मालूम न होगी।

चम्पा

लेकिन मैं तो तुमसे कुछ पूछती भी नहीं। इस तरह की बातों से तुम मेरी उत्सुकता बढ़ा रहे हो, लेकिन बतलाना नहीं चाहते। मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है गजराज ? [ उदास होकर ] मेरा दुःख भी तुम जानते हो। उसपर भी तुम मेरे साथ इतने कठोर........

गजराज

तुम्हारा दुःख तो मैं खूब जानता हूँ। लेकिन उसका भी कारण मैं ही हूँ। मुझको दुःख है, तुमको दुःख है, सरकार को दुःख है; और अगर नरेन्द्र बाबू और मालिक भी जीते हों, तो उनलोगों को भी दुःख है। एक साथ इतने

आदमियों को दुःख है, और सबके दुःख का कारण मैं हूँ........मैं [ उत्तेजित होकर सड़क की ओर बढ़ता है ]

चम्पा

कहाँ जा रहे हो ? हे ईश्वर ! नहीं सुनते ? कह देती हूँ, सिर पटक दूँगी । पटक दूँगी सिर । सुनो । गजराज !

गजराज

[ लौटकर ] कहिये । मैं अब ठहर नहीं सकता ।

चम्पा

कहाँ जाओगे ? [ उसका हाथ पकड़ लेती है ]

गजराज

जहाँ भाग्य ले जाय ।

चम्पा

क्यों ?

गजराज

आप लोगों के साथ रहना ठीक नहीं । अभी तो हाथ-पैर में दम है । मालिक की तरह बुढ़ापे में अगर जाना पड़ा, तो कहीं-न-कहीं रास्ते में ही कुत्ते-गीदड़ का पेट भरना पड़ेगा ।

चम्पा

ओह ! तो तुम इसीलिये आज उद्विग्न हो और सबके दुःख का कारण बन रहे हो ? [ उसके मुँह की ओर ध्यान से देखने लगती हैं । ]

गजराज

इसीलिये नहीं। मैंने, चौबीस बरस हुए, पाप किया था। उसीका यह सब फल है। चौबीस बरस से मैं दुनिया को धोखे में डाले हुए हूँ, और अपने भी धोखे में पड़ा हूँ।

चम्पा

ओह ! तुम्हारी बात समझ में न आयेगी। ख़ैर, वे गये कहाँ ?

गजराज

स्वामीजी के साथ, शायद नदी-किनारे.......

चम्पा

और तुम तमाशा देखते रहे।

गजराज

तमाशा क्या ?

चम्पा

स्वामीजी कौन हैं ? कहा नहीं जा सकता। अगर किसी तरह का धोखा करें।

गजराज

स्वामीजी धोखा करें।

चम्पा

क्यों तुम अभी अपने पाप में इतना विक्षुब्ध हो। स्वामीजी कोई शत्रु हों। बड़ी रानी के मायके के हों।

गजराज

[ कुछ सोचकर ] हाँ········हो सकता है। आदमी कब क्या न कर देगा, कहा नहीं जा सकता। लेकिन बड़ी रानी सरकार की बुराई करायेंगी। कभी नहीं। और फिर दुनिया विश्वास पर टिकी है। चलूँ बिस्तर लगा दूँ। [ प्रस्थान ]

चम्पा वहीं हरी दूब पर इधर-उधर टहलने लगती है। नरेन्द्र सड़क की ओर से प्रवेश करता है। चम्पा को वहाँ टहलते देखकर क्षणभर रुक जाता है। थोड़ी देर के बाद मुँह से सीटी का स्वर निकालने लगता है। चम्पा का ध्यान उसकी ओर आकर्षित होता है। चाँदनी में उसकी आकृति

साफ़ नहीं देख पड़ती। चम्पा ध्यान से उसकी ओर देखती हुई चुपचाप खड़ी रहती है। नरेन्द्र लौटकर फिर सड़क पर निकल जाता है।

गजराज इस समय तक कमरे में दो पलँग बिछाकर दोनों पर मसहरी लगा देता है। एक पलँग उस दरवाज़े के पास बिछा है जिससे होकर बँगले के भीतरी हिस्से और ऊपर की तह में जाने का रास्ता है। दूसरा पलँग उससे थोड़ी दूर कमरे के बीच में बिछा है। गजराज कमरे के दरवाज़े लगाकर चम्पा के पास आता है।

गजराज

जाइये न छत पर, अब ठंडा हो गया होगा!

चम्पा

और यहाँ?

गजराज

यहाँ कोई बैठने की जगह नहीं है? और शायद अब स्वामीजी आ जायँ।

चम्पा

तुम जानते हो, मैं पर्दा तो करती नहीं, और आज शाम को टहलने नहीं गई, इस तरह वह काम भी हो जायेगा। और इसके अतिरिक्त मैं स्वामीजी से कुछ बातें भी करना चाहती हूँ।

गजराज

स्वामीजी से बातें ? [ विस्मय के स्वर में ] ऐसा क्या...?

चम्पा

हाँ...कहते चलो [ गम्भीर होकर ] चुप क्यों हो गये ? कहो न।

गजराज

नहीं, यह तो अच्छा नहीं होगा। रानी होकर साधू-संन्यासी से बातें करना—

चम्पा

गजराज !

गजराज

कहिये न ?

चम्पा

तुम किसपर सन्देह करते हो—रानी पर या संन्यासी पर ? बोलो...

गजराज

मुझे अच्छा नहीं लगता, और मैं यह होने भी न दूँगा।

चम्पा

क्यों ? इसमें बुराई क्या है ?

गजराज

स्वामी लोग स्त्री से बातें नहीं करते—उनकी ओर देखते नहीं ।

चम्पा

स्त्रियाँ बाघिन होती हैं क्या ? या नागिन होती हैं जो कि स्वामीजी लोगों को खा जाती हैं या डँस लेती हैं ? यह तुम्हारा अपराध नहीं है गजराज । ऐसी ही पुरुष-जाति है ! पुरुष का काम है स्त्री का अविश्वास करना और उसके हृदय को ठोकर मारकर अपमान और लाञ्छन से भर देना ।

शत्रुसूदन का प्रवेश ।

शत्रुसूदन

कैसा अपमान और लाञ्छन ! [ सूखी आँखों से चम्पा को देखने लगता है ]

चम्पा

[ दो डग आगे बढ़कर ] पुरुष का सबसे बड़ा पौरुष और

गुण—स्त्री का अविश्वास करना, उसे सदैव सन्देह की दृष्टि से देखना, उसके आचरण पर पहरा बैठाना और अंत में अपमान और लाञ्छन से उसके हृदय का चूर-चूर कर देना।

गजराज का प्रस्थान।

शत्रुसूदन

यह सब तुम गजराज के सामने कह जाती हो। तुम्हें लज्जा नहीं मालूम होती?

चम्पा

ज्वार के समय समुद्र की मर्यादा नहीं रहती। वह उफन कर ऊपर की ओर बढ़ता है। लोग कहते हैं, चंद्रमा को छूने चला है!

शत्रुसूदन

अच्छा........

चम्पा

स्त्री का जन्म हुआ था पुरुष की धरोहर—उसका विष सुरक्षित रखने के लिये। अन्यथा वह अपने ही ज़हर से जल मरता। जल मरता अपने ही ज़हर से।

शत्रुसूदन

अगर ऐसा नहीं होता तब ?

चम्पा

स्त्री अपना पंख फैलाकर आकाश में उड़ती होती। [ गंभीर होकर ] उड़ती होती।

शत्रुसूदन

[ उसके कन्धे पर हाथ रखकर ] किससे यह सब कह रही हो ?

चम्पा

अपने पति से, अपने मालिक से, अपने ईश्वर से, अपने शिव से, अपने ब्रह्मा से। जो मेरा है और जिसकी मैं हूँ, उससे ! मैं स्वामीजी से कुछ बातें करूँगी।

शत्रुसूदन

किस विषय की ?

चम्पा

अपने विषय की। मैं उनसे सम्मोहन-मंत्र सीखूँगी।

शत्रुसूदन

मारण और उच्चाटन नहीं ?

चम्पा

वह तो सीख चुकी हूँ। वह तो स्त्री के रक्त के साथ ही पैदा होता है।

शत्रुसूदन

मेरी समझ में तो स्त्री के रक्त के साथ केवल सम्मोहन पैदा होता है।

चम्पा

आपकी समझ में, पुरुष की समझ में, जो संसार का शासक है, जो और सब समझता है लेकिन स्त्री का हृदय नहीं—उसकी समझ में जो स्त्री को नन्दन का पारिजात पुष्पगुच्छ कहता है, स्वर्ग का संगीत कहता है, जीवन का वसन्त कहता है—जिसकी कल्पना और कला का चरम स्त्री का रूप है; लेकिन जब उसके मोह का उतार होता है, जिसे वह आत्मज्ञान समझता है, उस कमल, संगीत और वसन्त के एकाकार को कितना ठुकराता है और कितना कुचल देता है। [एकाएक चुप होकर आकाश की ओर देखने लगती है]

हाँ, तो मैं स्वामीजी से बातें करूँगी। ज़रूर······नहीं-नहीं, मुझे रोको नहीं। मैं देखना चाहती हूँ कि······

शत्रुसूदन

क्या देखना चाहती हो?

चम्पा

यही कि स्वामीजी देवता हैं या राक्षस······

शत्रुसूदन

[ विस्मय से ] राक्षस······?

चम्पा

मेरी तो यही धारणा है।

शत्रुसूदन

लेकिन इस धारणा का आधार? देखता हूँ, तुम्हारा·· [ एकाएक रुक जाता है ]

चम्पा

स्वामीजी अभी यहाँ आये थे। [सड़क की ओर हाथ उठाकर] वहाँ कुछ देर खड़े रहे। मेरी ओर देखते रहे, उसके बाद लौटकर चले गये।

शत्रुसूदन

तो इससे क्या ? उनका देवत्व—

चम्पा

जी नहीं, मैं तो इसे ही उनका राक्षसत्व······

शत्रुसूदन

विचित्र स्त्री !

चम्पा

विचित्र नहीं। बिल्कुल स्वाभाविक। इसी दुनिया की। [ कुछ सोचकर ] मुझे देखकर उनका इधर आने का साहस नहीं हुआ। योगी को भय है। उसका हृदय विकारहीन नहीं हुआ।

शत्रुसूदन

मान लो, यही बात है, तो फिर बात करने की क्या जरूरत ?

चम्पा

समझने के लिये। सचाई के लिये।

शत्रुसूदन

उसकी ज़रूरत ?

चम्पा

अपनी जिज्ञासा-तृप्ति के लिये। मैं जानना चाहती हूँ, इसलिये।

शत्रुसूदन

लेकिन मैं कहता हूँ, इससे लाभ ? योगी के साथ तर्क करने की ज़रूरत ?

चम्पा

तर्क वास्तव में योगी से करना ही चाहिये। योगी का काम है तत्त्वदर्शी होना, और जो तत्त्वदर्शी है उससे तर्क होता ही है। सैकड़ों-हज़ारों वर्ष के बाद सभी की ज़बान अब खुलना चाहती है। स्त्री-शिक्षा और साथ-ही-साथ उसके अधिकार—पर्वत फोड़कर नदी बाहर निकली है—समतल भूमि में वह रोकी नहीं जा सकती। अब तो स्त्री तर्क करेगी, प्रतिवाद करेगी और ज़रूरत पड़ेगी तो युद्ध करेगी। वह तो अब समझना चाहती है—अपनेको, दूसरों को, जगत् को और इसी लिये वह पुरुषों के साथ परीक्षा

दे रही है। नहीं तो फिर क्या ज़रूरत थी। ज्वालामुखी भड़क उठा है। उसके हृदय की आग अब दबाई नहीं जा सकती।

गजराज का प्रवेश।

शत्रुसूदन

क्या है जी ?

गजराज

सरकार, मुझे अब छुट्टी मिल जाय।

शत्रुसूदन

[ चौंककर ] क्यों ?

गजराज

तबीयत घबरा उठी है। चालीस बरस हो गया नौकरी करते। अब तो कहीं दस बीघा खेत मिल जाय और एक जोड़ी बैल। दस-बीस बरस की और ज़िन्दगी है, बीत जायेगी।

शत्रुसूदन

मालूम होता है, दीवान साहब के चले जाने के कारण तुम यह तमाशा खड़ा कर रहे हो।

गजराज

नहीं सरकार, मालिक साठ वर्ष से नौकरी करते रहे

और मुझे चालीस बरस हुआ। मेरी आँखों के सामने एक-एक दिन आये और निकल गये। जिस दिन दरबार में पहले-पहल हाज़िर हुआ था—बारह बरस का था। लेकिन ऐसा मालूम हो रहा है जैसे अभी कल की बात है। मुझे मालूम होता है जैसे सब कुछ देख रहा हूँ, आँख बन्द करने पर बड़े सरकार की सूरत सामने आ जाती है।

चम्पा

अच्छा हो, उन्हें छुट्टी दे दी जाय !

गजराज

हाँ सरकार, कोई नया आदमी आयेगा। समझदार होगा। इशारे पर काम करता रहेगा। दिन-रात में दस-बीस ग़लती रोज़ हो जाती है। कान से सुनाई भी कम पड़ रहा है और आँख की रोशनी भी अब जवाब दे रही है।

शत्रुसूदन

अच्छा, तुम जाओगे कहाँ ?

गजराज

[ कुछ सोचकर ] गाँव पर...

शत्रुसूदन

वहाँ तुम्हारा कोई है ?

गजराज

[ सिर हिलाकर ] है तो कोई नहीं। जब से नौकरी की, कभी वहाँ गया भी नहीं। घर भी, बहुत दिन हुए, मरम्मत न होने से गिर पड़ा।

शत्रुसूदन

तब कहाँ जाओगे ? किसके घर ?

गजराज

दीवारें गिर पड़ी होंगी। ज़मीन ऊँची हो गई होगी न। वहीं एक झोपड़ी डालूँगा। गाँववालों से सरपत और बाँस माँग लूँगा। दिन डूब जाने पर अँधेरा होगा मैं झोपड़ी के दरवाज़े पर बाहर चारपाई बिछाकर कहानी कहूँगा। लोग सुनेंगे। मेरी कहानी तो सरकार भी सुन चुके हैं और तारीफ़ कर चुके हैं।

शत्रुसूदन

और मरने पर क्या होगा गजराज ?

गजराज

मरने पर चाहे जो हो सरकार ! बिरादरीवाले दया करेंगे—फूँक देंगे या फेंक देंगे। जब तक घट में प्राण है, चाहे कोई रोये या हँसे। उसके बाद तो सरकार, सबकी गति एक है। राजा हो या रंक, अमीर हो या ग़रीब, उस दिन तो सब बराबर हैं।

शत्रुसूदन

दीवान साहब भी चले गये गजराज ! तुम भी जाओगे ?

गजराज

नये नौकर मिलेंगे सरकार·····

शत्रुसूदन

तुमको हमारी चिन्ता न होगी ?

गजराज

होगी तो। मैं भगवान से आपकी भलाई के लिये मनाया करूँगा। साल में दशमी को भवानी की पूजा में आकर सरकार का दर्शन करूँगा।

शत्रुसूदन

नहीं। यह नहीं हो सकता। तुम्हारे न रहने पर तो मेरी हालत परकटे बाज की हो जायेगी। जब से होश सम्हाला, तुम्हारे साथ हूँ। बचपन में खेलने भी गया तो तुम्हारे ही साथ। जब तक पढ़ता रहा, तुम बराबर साथ रहे। कालेज के दिनों में मैं जिस किसी भी कमरे में बैठता था, तुम बाहर उसके दरवाज़े के बग़ल में बैठे रहते थे। मैंने कई बार देखा था तुम्हें खिड़की से अपनी ओर देखते हुए। तुम बराबर मेरी चारपाई के पास नीचे फ़र्श पर सोते रहे हो। जब कभी नींद खुली, तुम्हें जागते ही पाया। मेरे बारे में तुमने आज तक कभी किसी दूसरे का विश्वास नहीं किया। इससे बढ़कर अपने सगे लड़के का भी........

गजराज

दुहाई सरकार की! [ दोनों हाथ जोड़कर ] चुप रहिये। अब कुछ न कहिये। मालूम हो रहा है जैसे छाती फट रही है। [ ज़मीन पर बैठकर शत्रुसूदन के पैरों पर अपना सिर रखकर सिसक-सिसककर रोने लगता है और दोनों हाथों के बीच में कसकर उनकी टाँगें पकड़ लेता है। शत्रुसूदन भी वहीं बैठकर गजराज का सिर दोनों हाथों में पकड़कर उठाना चाहते हैं। ]

चम्पा

[ शत्रुसूदन के बग़ल में बैठकर ] आपके जाने के बाद से ही इनकी तबीयत ऐसी ही है। इसी तरह विक्षिप्त होकर मुझसे भी न मालूम क्या कहते रहे हैं। चौबीस वर्ष पहले इन्होंने कोई पाप किया था। इतने दिनों बाद इनके मन में पश्चात्ताप पैदा हो रहा है! अभी कहते रहे हैं, दीवान साहब अगर डूब मरेंगे तो उसका पाप इन्हीं के सिर लगेगा। मेरे दुख का, आपके दुख का, दीवान साहब के दुख का और······सबके दुख का यही कारण हैं। मुझे तो इनकी यह हालत देखकर बड़ी घबराहट हो रही है।

शत्रुसूदन

[ उसको उठाने की कोशिश करते हुए ] गजराज! गजराज! गजराज! अरे मालूम हो रहा है, इसे मूर्च्छा आई! [ अपना पैर छुड़ाने का प्रयत्न करते हुए ] इसे बहुत दिनों से कोई दुःख सता रहा है। मुझे ऐसा कई बार अनुभव हुआ। मैंने पूछा भी, लेकिन हँसकर इधर-उधर करता रहा। मैं इसकी सरलता पर इतना मुग्ध था कि कभी मैंने बहुत ज़ोर देकर पूछा भी नहीं। मनुष्य का दुःख जब असह्य हो उठता है······[ चम्पा की ओर एकटक देखने लगता है ]

चम्पा

इस तरह क्यों देख रहे हैं ?

शत्रुसूदन

यही कि जब मनुष्य का दुःख असह्य हो उठता है।

चम्पा

हाँ, मैं जानती हूँ—"दर्द का हद से गुज़रना है दवा हो जाना।"

शत्रुसूदन

मशीन की तरह काम करता था। मैं समझता था, बूढ़े के पास हृदय नहीं है। जितना बड़ा इसका हृदय था उतना ही बड़ा इसका दुःख भी होगा। इसका दुःख भी एक समस्या है। न तो इसकी शादी हुई और न लड़के-बच्चे। अपने जीवन की इस स्वतन्त्रता से सदैव सन्तुष्ट रहता था। यह भी किसी अभाव का अनुभव करता है अथवा इसके भीतर भी कोई घाव छिपा पड़ा है। आज तक मुझे कभी इसकी धारणा भी नहीं हुई।

चम्पा

गाने के स्वर में—

कितनी दूर विकल चलकर ये, मेरे अश्रु अधीर।
आज चेतना-हीन गिर रहे, किस तटिनी के तीर॥

[ गजराज के सिर पर धीरे-धीरे अपना हाथ फेरने लगती है ] इसी लिये तो मैं बराबर कहती हूँ कि मनुष्य के हृदय का रहस्य समझा नहीं जा सकता। ऊपरी ठाटबाट और बोली-बानी सुनकर लोग भीतर का पता लगाना चाहते हैं। [अपनी छाती पर दोनों हाथ रखकर ] इस आठ अंगुल की जगह में एक समुद्र भरा पड़ा है—कोई जानता ही नहीं।

शत्रुसूदन

[ अपने दोनों हाथों की चार-चार उँगलियाँ मिलाकर चम्पा के ऊपर रखकर ] हाँ, आठ ही अंगुल तो है। [ चम्पा की ओर देखने लगता है ]

चम्पा

लेकिन उतने ही में एक समुद्र भरा पड़ा है!

शत्रुसूदन

इसी लिये तो इतना भयानक है। [ गजराज का सिर पकड़-

कर उठाना चाहता है ] इसे यों होश नहीं आयेगा। यहीं बैठी रहो... [ पुकारने के स्वर में ] सुदिनवाँ! रमुवाँ!

[ बँगले की ओर एक साथ कई आवाजें होती हैं ] हाँ, आया सरकार!

फ़ौजी पोशाक वाले दो सिपाही बन्दूक में संगीन लगाये आगे बढ़ते हैं।

शत्रुसूदन

[ चम्पा की ओर देखकर ] लेकिन इन सबका आना यहाँ ठीक होगा। [ गजराज की ओर देखकर ] पता नहीं, इसके मन में क्या हो ? [आगे बढ़ते हुए] स्मेलिंग साल्ट और एक्तिप्टस... हाँ...नहीं, तुमलोग वहीं रहो। कोई ज़रूरत नहीं। सोफ़र से कह दो, मोटर ठीक रक्खे। [ चम्पा का हाथ पकड़कर ] तुम यहीं रहो। शायद स्मेलिंग साल्ट या एक्तिप्टस से कुछ फ़ायदा हो। अभी आया।

चम्पा

अकेले डर लगेगा।

शत्रुसूदन

ज्वालामुखी फूट पड़ने पर भी डर ?

चम्पा

सब कुछ होते हुए भी स्त्री स्त्री रहेगी। मंच पर व्याख्यान देते समय तो वह पुरुष-रूपी निशुम्भ के लिये चंडी बन जायेगी—उसका हृदय फाड़कर उसका रक्त पीना चाहेगी; लेकिन जब व्याख्यान समाप्त होने पर मोटर में बैठेगी तो फिर वहीं रति, रम्भा, उर्वशी, तिलोत्तमा—वही ममता और मोह की बेहोशी। स्त्री का मार्ग तो भक्ति और त्याग का है—ज्ञान और अपहरण का नहीं।

शत्रुसूदन

तब ?

चम्पा

जाइये, लेकिन देर न कीजियेगा।

शत्रुसूदन

बेहोश गजराज भी ज़रूरत पड़ने पर तुम्हारी रक्षा में बाघ बन जायेगा। भूत-प्रेत तो तुम नहीं मानतीं। अभी दो घंटे रात बीती होगी।

चम्पा

मुझे इनकी चिन्ता है, और डर—

**शत्रुसूदन**

## ऐसा बहुत होता है; उनकी चिन्ता क्या ?

शत्रुसूदन का प्रस्थान ।

चम्पा गजराज के पास बैठकर उसके शरीर पर धीरे-धीरे हाथ फेरने लगती है । कभी उसकी छाती पर हाथ रखती है, कभी उसके सिर पर । कभी उसका हाथ पकड़कर उसकी उँगलियाँ खींचने लगती है ।

नरेन्द्र का प्रवेश । वह धीरे-धीरे मस्तानी चाल से चलकर वहाँ पहुँच जाता है जहाँ गजराज मूर्च्छित पड़ा है । चम्पा को उसके आने का पता नहीं चलता । वह उसी तरह गजराज की देह पर इधर-उधर हाथ रखकर उसे सचेत कर देना चाहती है । नरेन्द्र बड़ी देर तक ध्यान से यह सब देखता रहता है । नरेन्द्र, गजराज और चम्पा के चारों ओर घूमकर, कई जगह खड़ा होता है । चम्पा उसी तरह तन्मय होकर गजराज के शरीर के साथ खिलवाड़ कर रही है । नरेन्द्र, चम्पा के पीछे खड़ा होकर, चुपचाप आकाश की ओर देखने लगता है । निर्मल आकाश में चन्द्रमा, तारों के असंख्य फूल । पहले तो उसके ओठ पर मुस्कराहट आती है; लेकिन क्षण-भर में ही उसकी मुद्रा बहुत गम्भीर हो उठती है । मुट्ठी बाँधकर दोनों हाथ कमर पर रख देता है । दोनों बाँहें त्रिभुज बनाती हुई, दोनों बगलों में अलफ़ी की चौड़ी मुहरी के भीतर, उड़ने के समय चील के डैने की तरह, देख पड़ती हैं । बायें पैर पर ज़ोर देकर नरेन्द्र बाईं ओर झुककर खड़ा होता है ।

गजराज की साँस के साथ जैसे कुछ कराहने-सी ध्वनि निकलती है ।

चम्पा जैसे कुछ सचेत होकर तेज़ी के साथ गजराज के सिर पर हाथ फेरने लगती है। नरेन्द्र वहीं से झुककर गजराज का ललाट दायें हाथ की उँगलियों से छू देता है। उसकी केहुनी से ऊपर का हिस्सा चम्पा के जूड़े से छू ज़ाता है, और गजराज के सिर पर चम्पा के तेज़ी से घूमते हुए हाथ में नरेन्द्र की उँगलियाँ आ जाती हैं। चम्पा घबराकर उठती है—उसके सिर के धक्के से नरेन्द्र का झुका हुआ हाथ ऊपर को उठ जाता है। चम्पा तेज़ी से बँगले की ओर बढ़ती है।

नरेन्द्र

डरो न, मैं हूँ। इसे क्या हो गया ?

चम्पा

[ घूमकर नरेन्द्र की ओर देखती हुई ] मूर्च्छा आ गई है। आप ही स्वामीजी हैं जो शाम को आये थे ?

नरेन्द्र

तुम्हें देख नहीं पड़ता। रानी होने पर तो दृष्टि और तीव्र होनी चाहिये।

चम्पा

स्वामीजी, आप विरक्त हैं। दुनिया की नज़र और है, और आपकी और। रानी हो जाने पर तो अन्धी हो जाना पड़ता है। आँखें चश्मा हो जाती हैं।

नरेन्द्र

इसे मूर्च्छा क्यों आ गई ?

चम्पा

कौन जाने ? चौबीस वर्ष पहले इन्होंने कोई पाप किया था। आज दीवान साहब के निराश होकर चले जाने पर...उस पाप की स्मृति इनके मन में जाग उठी है, पश्चात्ताप की आग जल उठी है। लेकिन यह पता नहीं चलता कि कैसा पाप है, क्या है।

नरेन्द्र

हूँ...[ चम्पा की ओर एकटक देखते हुए ] अपनी प्रजा का प्रेम आपके हृदय में है। होना ही चाहिये।

[ चम्पा चुपचाप ध्यान से स्वामीजी की ओर देखती रहती है। स्वामीजी के मुँह पर चन्द्रमा की रोशनी पड़ रही है, उधर चम्पा के पीछे चन्द्रमा है ]

इतने ध्यान से क्या देख रही हैं ? [ चम्पा कुछ बोलती नहीं, चुपचाप नरेन्द्र की ओर देखती रहती है। नरेन्द्र बाँयें हाथ की उँगलियों से अपनी आँखें दबाकर थोड़ी देर तक खड़ा रहता है। चम्पा उसकी ओर देखती ही रहती है। ]

चम्पा

आपका नाम क्या है स्वामीजी ?

नरेन्द्र

[ चम्पा की ओर देखते हुए ] योगी अपना नाम नहीं बतलाते रानी ! वे किसी का शासन नहीं मानते—न राजा का, न रानी का ।

चम्पा

और अगर अपराध करें ?

नरेन्द्र

योगी कभी-कभी अपने साथ अपराध कर बैठते हैं, प्रयोग के लिये—साधन के लिये । दूसरे किसीके साथ वे अपराध नहीं करते । [ गजराज की ओर संकेत कर ] इसने कैसा पाप किया था !

चम्पा

यह तो कोई नहीं जानता । इनका कहना है, चौबीस वर्ष पहले इन्होंने पाप किया था और इनके पाप से मैं दुखी हूँ, सरकार दुखी हैं, दीवान रघुवंशसिंह दुखी हैं और उनके लड़के—अगर वे इस समय कहीं जीवित हों तो—वे भी दुखी हैं ।

नरेन्द्र

[ उत्सुक होकर ] किसके लड़के ?

चम्पा

दीवान रघुवंशसिंह के।

नरेन्द्र

उनका नाम क्या था ?

चम्पा

नरेन्द्र, हाँ [ कुछ सोचकर ] हाँ, यही नाम था।

नरेन्द्र

मालूम होता है, यह नाम आपके लिये बहुत अप्रिय है। नरेन्द्र—तीन अक्षर का नाम उच्चारण करना—आपकी ज़बान लड़खड़ा उठी। कठिनता से किसी तरह इस नाम का उच्चारण आपसे हो सका। इतने जीव एक साथ दुखी हैं और इन सबके दुख का कारण यही [ गजराज की ओर संकेत कर ] यह बुड्ढा है। यही न ?

चम्पा

कहते तो यही हैं।

नरेन्द्र

[ जैसे सोचने की मुद्रा में ] हूँ—तो मतलब यह कि अगर किसी तरह इसका दुख मिटा दिया जाय, तो इन सब अभागों का दुःख मिट जायेगा । मिट जायेगा न? [ चम्पा की ओर देखने लगता है । चम्पा सिर नीचे कर जमीन की ओर देखने लगती है ] इधर देखो रानी । एक साथ तुम्हारी इतनी प्रजा दुखी है ।

चम्पा

तो मैं क्या करूँ स्वामिन्—

नरेन्द्र

वही जो माता का काम है । अपने हृदय को विशाल करो, शीतल करो और इन अभागों को उसीमें जगह दो ।

चम्पा

आप कह क्या रहे हैं ?

नरेन्द्र

कोई नई बात नहीं । तुम्हारा स्थान तो जगदम्बा का स्थान है ।

चम्पा

तो आप छायावाद में बोल रहे हैं।

नरेन्द्र

छायावाद में तो साहित्य के रोगी बोलते हैं और धर्म के अन्धे। मैं तो राजयोगी हूँ—राजा हूँ। छायावाद मेरे लिये नहीं है। नरेन्द्र को आपने कभी देखा था या नहीं? [ चम्पा सन्देह से उसकी ओर देखती है ] हाँ, कहिये।

चम्पा

इसका उत्तर देना...यह जानकर आप क्या करेंगे।

नरेन्द्र

अच्छा तो आपने उसे देखा था। शायद आपसे उसका कुछ अधिक अनिष्ट भी हुआ। इस लिये उसके सम्बन्ध में आप असमंजस में पड़ी हैं। क्यों, है यही बात न?

चम्पा

[ रूखे स्वर में ] नहीं...

नरेन्द्र

लेकिन स्वर क्यों बदल गया। मेरी ओर इतने ध्यान से क्यों देख रही हैं। अगर मैं भी इसी तरह आपकी ओर

देख लूँगा, तो आप बेहोश हो जायेंगी। मेरी आँखें आप सम्हाल नहीं सकतीं—इस तरह न देखा कीजिये, ख़तरा है। मैं आपको सचेत कर देता हूँ।

चम्पा

हूँ, तब तो आप पूरे जादूगर हैं! योगी की सिद्धि तो आध्यात्मिक होती है, इस तरह की शारीरिक नहीं।

नरेन्द्र

देखता हूँ, आपकी ज़बान बड़ी तेज़ है। जैसे योगी को आपने अपनी गोद में खेलाया हो। श्रीमतीजी, कालेज का तर्क यहाँ काम नहीं करेगा। शब्दों का ज्ञान बहुत काम नहीं आता।

[गजराज के समीप जाकर उसके सिर पर, छाती पर, जाँघ पर, फिर पैर पर हाथ रखता है। चम्पा भी समीप जाकर देखने लगती है] इसका दोनों पैर एक में मिलाकर पकड़ो तो। [चम्पा गजराज के दोनों पैर मिलाकर दोनों हाथों से पकड़ती है। नरेन्द्र उसका दोनों हाथ पकड़कर कुछ आगे झुककर अपनी छाती पर रख लेता है] ज़ोर से पकड़े रहना। अभी पैर बड़े ज़ोरों से काँपने लगेंगे। छूटने न पायें। [नरेन्द्र गहरी साँस लेने लगता है। उसकी छाती

साँस खींचने के समय आगे को निकल जाती है और उसके साथ-ही-साथ गजराज के दोनों हाथ आगे-पीछे होने लगते हैं। ]

स्ट्रेचर लिये हुए दो आदमियों के साथ शत्रुसूदन का प्रवेश। शत्रुसूदन यह सब देखकर अवाक् रह जाते हैं। उनके साथी स्ट्रेचर रखकर पीछे हटकर खड़े होते हैं। शत्रुसूदन चम्पा के पास आकर खड़े होते हैं।

चम्पा

[ शत्रुसूदन की ओर देखकर ] इसे पकड़िये। जैसे मेरा हाथ टूटा जा रहा है।

शत्रुसूदन ज्योंहीं अपने हाथ बढ़ाता है, नरेन्द्र हाथ हिलाकर 'नहीं' संकेत करता है। शत्रुसूदन चुपचाप खड़ा हो जाता है। गजराज के पैर थर-थर-थर काँपने लगते हैं; साथ-ही-साथ चम्पा के हाथ भी जोरों से हिलने लगते हैं। चम्पा नाक सिकोड़ लेती है जैसे उसे बड़ी तकलीफ़ हो रही हो। नरेन्द्र जोर से साँस लेने लगता है। उसके सिर से पसीना चलकर सब ओर से मुँह पर बहकर टप-टप चूने लगता है। चम्पा उसकी ओर देखती है।

नरेन्द्र

बस छोड़ दो पैर [ चम्पा पैर छोड़ देती है। नरेन्द्र उसके हाथ छोड़ देता है, जो कि झटके के साथ पृथ्वी पर गिरते हैं। ] गजराज! गजराज! [ गजराज चौंककर उठ बैठता है ] गजराज!

गजराज

जी सरकार........

नरेन्द्र

कैसी तबीयत है ?

गजराज

[ छाती पर हाथ रखकर ] बड़ी गर्मी मालूम हो रही है ।

नरेन्द्र

उठो, खड़े हो ।

[ गजराज उठकर खड़ा होता है ]

नरेन्द्र

यहाँ आओ ।

[ गजराज उसके पास जाकर खड़ा होता है । नरेन्द्र उसकी छाती पर हाथ रखता है ] यहाँ दर्द हो रहा है ?

गजराज

हाँ महाराज—

नरेन्द्र

यह दर्द तुम्हें कितने दिनों से है ?

गजराज सिर नीचे की ओर कर चुपचाप खड़ा रहता है ।

शत्रुसूदन

गजराज, बतला दो। स्वामीजी पूछ रहे हैं।

चम्पा

शायद कुछ विचार कर रहे हैं।

शत्रुसूदन

तुमलोग स्ट्रेचर लेकर जाओ।

उन दोनों आदमियों का स्ट्रेचर लेकर प्रस्थान।

नरेन्द्र

गजराज !

[गजराज उसी तरह सिर नीचे की ओर किये खड़ा रहता है] हूँ, तो तुम अपनी बीमारी से प्रेम करते हो। उसे छोड़ नहीं सकते।

गजराज

[नरेन्द्र की ओर देखकर] महाराज, आज मुझे छोड़ दीजिये। किसी दूसरे दिन कह दूँगा।

नरेन्द्र

दूसरे दिन नहीं जी, आज। मैं तुम्हारी बीमारी निकाल दूँगा।

गजराज

तब रहने दीजिये मुझे इसी तरह।

नरेन्द्र

लेकिन यह नहीं हो सकता। [ चम्पा की ओर देखकर ] योगी रोग नहीं छोड़ सकता। योगी तो केवल संसार की व्याधि दूर करता है। यही उसका काम है। [ दायें हाथ की मुट्ठी बाँधकर हिलाते हुए ] तुम्हारा दुःख मेरा दुःख है, सारे संसार का दुःख है। मैं उसे रहने नहीं दूँगा। इस लिये पूछ रहा हूँ, तुम्हारा रोग कितना पुराना है? उसके अनुसार उपचार करूँगा! बोलो।

गजराज

मेरा रोग बहुत पुराना है महाराज! उसके लिये कोई दवा है ही नहीं।

नरेन्द्र

मैं फिर कहता हूँ, तुम अपने रोग से प्रेम कर रहे हो। आत्मा के ऊपर प्रकृति, चेतन के ऊपर जड़।

गजराज

नहीं समझा। [ गहरी साँस लेता है ]

नरेन्द्र

तब तुम्हें वह भी समझाना पड़ेगा। आत्मा का रोग मनुष्य नहीं समझता ; उसके लिये भी शारीरिक औषधियाँ खाता है। गजराज, मैं तुम्हारी व्याधि निकालूँगा।

गजराज

जो तबीयत हो, कीजिये महाराज। मुझसे कुछ न पूछिये।

शत्रुसूदन

क्यों गजराज ? स्वामीजी तुम्हारे ही लिये...

गजराज

ठीक है सरकार, मेरे ही लिये। लेकिन मैं कुछ न बताऊँगा।

चम्पा

तो इसी तरह बीमार रहोगे ?

गजराज

इसी तरह तो बहुत दिनों से हूँ। वैसे ही रहूँगा। [नरेन्द्र की ओर हाथ जोड़कर ] रहने दीजिये महाराज मुझे इसी तरह।

नरेन्द्र

रोगी का स्वभाव है। रोग पड़ा रहे, प्राण चला जाय; लेकिन रोग निकालने में कोई कष्ट न उठाना पड़े। यह सब-का स्वभाव है गजराज, तुम्हारा ही नहीं। [ शत्रुसूदन और चम्पा की ओर देखकर ] यह लोग भी रोगी हैं। लेकिन इन लोगों के लिये अभी समय है; लेकिन तुम्हारे लिये, तुम्हारा समय तो अब आ गया। अगर अब नहीं तो कभी नहीं। चले जाने पर मैं फिर कभी यहाँ आऊँगा या नहीं, कौन जाने? इसलिये कम-से-कम तुम्हें तो इसी समय स्वस्थ करना है। इधर देखो मेरी ओर...देखो। [ गजराज नरेन्द्र की ओर देखता रहता है ] इधर देखो, मेरी आँख की ओर, मेरी आँख की ओर। [ थोड़ी देर तक दोनों एक दूसरे की ओर देखते रहते हैं। चम्पा शत्रुसूदन के पास जाकर खड़ी होती है ] कैसा मालूम हो रहा है गजराज?

गजराज

आँख में पानी आ रहा है महाराज।

नरेन्द्र

[ पृथ्वी की ओर संकेत कर ] अच्छा, तुम यहाँ लेट जाओ। मुँह सीधे आकाश की ओर रहे।

गजराज

[ अनिच्छापूर्वक ] महाराज—

शत्रुसूदन

हाँ, हाँ, लेट जाओ। डरते क्यों हो ?

गजराज आकाश की ओर देखता हुआ लेट रहता है। नरेन्द्र उसके दोनों पैरों को मिलाकर और दोनों हाथों को बगलों में सीधा कमर से लगाकर रख देता है।

नरेन्द्र

चन्द्रमा की ओर देख रहे हो ?

गजराज

हाँ।

चम्पा बड़े ध्यान से गजराज को ओर देखने लगती है। शत्रुसूदन अपना हाथ चम्पा के कन्धे पर रख देता है।

नरेन्द्र

चन्द्रमा की ओर नहीं, मेरी ओर देखो। मेरी आँखें साफ़ देख पड़ रही हैं न ?

गजराज

जी...

नरेन्द्र

इसी तरह देखते रहो।

गजराज

कब तक ?

नरेन्द्र

जब तक देख सको !

गजराज

इस तरह तो रात-भर देखता रह जाऊँगा।

नरेन्द्र

[ हँसते हुए ] रात-भर देख सकोगे ?

गजराज

हाँ स्वामीजी, आप देखिये।

नरेन्द्र

[ झुककर उसके सिर पर हाथ रखता है ] तुम वीर हो, इसमें सन्देह नहीं। आँख बन्द करो तो अब।

[ गजराज आँखें बन्द करता है। नरेन्द्र उसके चारों ओर दो-तीन वार घूमता है। फिर रुककर दोनों हाथों की उँगलियों को तेज़ी से हिलाकर अपने हाथ उसके सिर की ओर से उसके पैर की ओर ले जाता है। उसका हाथ उसके शरीर से केवल चार अंगुल के अन्तर पर ऊपर रहता है। कई वार उँगलियाँ हिलाकर अपने हाथ उसके सिर की ओर से पैर की ओर ले जाता है। मालूम होता है जैसे कोई चीज उसके सिर से पैर की ओर उतार रहा है। गजराज की आँखें दोनों हाथों से छूकर ] **सो जाओ। खूब गाढ़ी निद्रा में सो जाओ। गाढ़ी नींद, गाढ़ी नींद। गजराज! गजराज!**

**गजराज**

[ धीमे स्वर में ] **हाँ,**





**नरेन्द्र**

**नींद आ रही है न?**

**गजराज**

[ और भी धीमे स्वर में ] **हाँ,**

नरेन्द्र फिर अपने दोनों हाथों की उँगलियों को हिलाकर उसके सिर को ओर से पैर की ओर ले जाता है। गजराज गहरी साँस लेने लगता है जिससे मालूम होता है कि वह सो गया। नरेन्द्र दायें हाथ से उसका सिर, छाती, जाँघ और पैर छूता है। थोड़ी देर तक झुककर उसके मुँह की ओर देखता है। गजराज का सिर, जो सीधे ऊपर था, एक ओर बगल में झुक जाता है।

नरेन्द्र

गजराज ! गजराज ! गजराज ! सो गया !

चम्पा

सो गये ?

नरेन्द्र

हाँ, ऐसी गहरी नींद इसे शायद बहुत दिनों के बाद आई होगी।

चम्पा

देखूँ, सो गया है। [ गजराज का हाथ पकड़कर खींचती है ]

नरेन्द्र

इसकी साँस से नहीं मालूम होता। इस समय तो सूई चुभाने पर भी इसकी नींद नहीं खुलेगी !

शत्रुसूदन

[ समीप जाकर ] आपने इन्हें बिल्कुल बेहोश कर दिया !

नरेन्द्र

बेहोश नहीं कर दिया जी—सुला दिया, छोड़ दो रात-भर यहीं सोता रहे।

शत्रुसूदन

और अगर मर जाय !

नरेन्द्र

मर जाय क्यों ?

शत्रुसूदन

शायद फिर होश न हो !

नरेन्द्र

लेकिन क्यों ?

चम्पा

क्यों नहीं—'जिन या वेदन निरमई, भला करेगो सोय' !

शत्रुसूदन

तुम्हारा संगीत और कवित्व ऐसे ही अवसर पर निकलता है।

नरेन्द्र

लेकिन उसके लिये उपयुक्त अवसर भी यही है। दुखी जीव [ गजराज की ओर संकेत कर ] अपना दुःख भूलकर असीम के साथ एक हो गया है। यही तो अवसर है

संगीत और कवित्व का...अगर इनका उद्देश्य सचेत करना हो तो...आत्मा को मुक्त करना हो तो; लेकिन अगर इनका अभिप्राय शराब की मस्ती लानी हो, तब तो फिर बात ही दूसरी है।

शत्रुसूदन

अब क्या होगा ?

नरेन्द्र

बच्चे की तरह घबड़ा क्यों रहे हो ? मेरी इससे कोई शत्रुता तो है नहीं कि मैं इसे मार डालूँगा। और फिर मार डालना मेरी शक्ति के बाहर की चीज़ है। इसकी बीमारी कैसे दूर की जाय ? इसमें तो सन्देह नहीं कि इसने कभी कोई-न-कोई बुराई की। उसका पश्चात्ताप इसे अब भी होता है। कैसी बुराई की, यह तो यह बतलायेगा नहीं, और जब तक कि बात प्रकट नहीं हो जाती...इसका पश्चात्ताप कम भी नहीं होगा।

चम्पा

यह तो नहीं बतलावेंगे।

नरेन्द्र

[ चम्पा की ओर देखकर ] मैं न पूछता हूँ। देखो, अभी बतलाता है या नहीं। मनुष्य अपने हृदय को कितना ही छिपाकर रक्खे, मेरी नज़र उसके भीतर ज़रूर चली जायेगी। कोई मनुष्य हो। कहो मैं तुम्हारे हृदय का चित्र रख दूँ।

चम्पा

लेकिन वह मिलेगा कहाँ ?

नरेन्द्र

तुम्हारे हृदय में मिलेगा। उसीमें से निकाल लूँगा।

चम्पा

मेरे हृदय में से ?

नरेन्द्र

हाँ-हाँ, तुम्हारे हृदय में से; और केवल तुम्हारे ही नहीं, हर किसीके हृदय में से। तुम जितना समझ रही हो, मेरे लिये तुम्हारा हृदय उतना सुरक्षित और गुप्त नहीं है। [ गजराज की ओर संकेत कर ] देखो इसका हृदय। देखती हो, तुम्हारा या किसी भी स्त्री का हृदय इससे बड़ा हो नहीं

सकता। जब यह मेरे क़ाबू में आ गया तो तुम्हारी क्या बात ! [ शत्रुसूदन की ओर ध्यान से देखने लगता है ] क्यों राजकुमार, मैंने ठीक कहा या नहीं ?

शत्रुसूदन

[ जैसे गहरे विचार में ] हो सकता है।

नरेन्द्र

इतने गम्भीर होकर नहीं लड़के ! तुम्हें तो इसपर हँस पड़ना चाहिये। पुरुष का हृदय स्त्री के हृदय से सदैव बलवान होता है। स्त्री किस बात पर दम्भ करे। इस ज़माने में स्त्री पुरुष की प्रतिहिंसा को खड़ी हो रही है। प्रकृति का बदला वह लेना चाहती है पुरुष से। उसकी आँखों में ज़्यादा आँसू है—इस लिये कि उसके हृदय में ज़्यादा गर्मी है—इसमें पुरुष का क्या अपराध ?

चम्पा

स्वामीजी का चले तो संसार से स्त्रियों का निर्वासन कर दें !

शत्रुसूदन

[ चम्पा की ओर देखकर ] चुप रहो ! [ उसकी ओर घूरकर देखने लगता है ]

नरेन्द्र

इस तरह का दबाव सदैव हानिकर होता है राजकुमार ! बात तो इन्होंने बिलकुल सच्ची कही । सचाई को दबाना ही तो पाप है । पाप की परिभाषा वही है जो असत्य की है ।

[ गजराज के सिर पर हाथ रखकर ] गजराज ! गजराज ! गजराज !

गजराज

जी...

नरेन्द्र

देख रहे हो ?

दीवान रघुवंशसिंह उसी वेश में खुली तलवार लेकर प्रवेश करते हैं और जहाँ ये लोग हैं उससे दस क़दम पीछे चुपचाप खड़े हो जाते हैं ।

गजराज

हाँ, देख रहा हूँ ।

चम्पा

होश हो गया क्या ?

नरेन्द्र

जो होश बराबर रहता था वह बाहरी होश तो अभी होगा नहीं, जब तक मैं चाहूँगा नहीं; लेकिन यह भीतरी होश मैंने पैदा कर दिया है। मैं पूछता जाऊँगा और यह उत्तर देता जायेगा, और इस तरह मैं इसकी बीमारी······ उसकी जड़ निकाल लूँगा। गजराज ! किसे देख रहे हो ?

गजराज

आपको।

चम्पा

आँख तो बन्द है।

नरेन्द्र

वह तो है ही !

चम्पा

तब देख कैसे रहे हैं ?

नरेन्द्र

वह बात इतनी सरल नहीं है कि बतलाई जा सके। चुपचाप सुनो। गजराज!

गजराज

जी...

नरेन्द्र

यहाँ और कौन-कौन लोग हैं?

गजराज

स्वामीजी, रानी और मालिक!

नरेन्द्र

मालिक कौन जी?

गजराज

दीवान रघुवंशसिंह।

नरेन्द्र

वह कहाँ हैं जी? वह तो यहाँ नहीं हैं।

गजराज

हैं तो?

नरेन्द्र

कहाँ हैं। ध्यान से देखो।

गजराज

देख लिया। अपने पीछे देखिये।

नरेन्द्र, शत्रुसूदन, चम्पा, सब उसी ओर देखते हैं। रघुवंशसिंह आगे बढ़ते हैं।

रघुवंशसिंह

राजकुमार, मैं यह तलवार लिये गया। यह रतनपुर के दीवान की तलवार है। ले लो; जिसे गद्दी देना, यह तलवार भी दे देना। बड़े सरकार ने दी थी; तुम ले लो। [ सिर से पगड़ी उतारकर ] और इसे भी। [ तलवार और पगड़ी शत्रुसूदन के पास ज़मीन पर रख देता है। फिर गजराज के पास खड़ा होकर ] गजराज ! गजराज !

नरेन्द्र

[ रघुवंशसिंह को संकेत से मना कर ] गजराज !

गजराज

जी...हाँ।

नरेन्द्र

कैसी तबीयत है ?

गजराज

आसमान में उड़कर कहीं जा रहा हूँ। बड़ा अच्छा मालूम हो रहा है !

नरेन्द्र

अच्छा; यह बतला सकते हो—राजकुमार के पिता का नाम क्या था ?

गजराज

सुरेशसिंह।

नरेन्द्र

तुम्हारे कितने बच्चे हुए थे ?

गजराज

एक...

रघुवंश

हे भगवान! इसकी तो शादी हुई ही नहीं !

नरेन्द्र

गजराज, तुम्हारी शादी हुई थी ?

गजराज

नहीं।

नरेन्द्र

तब तुम्हें बच्चा कहाँ से हुआ ?

गजराज

एक लड़की हुई थी। दूसरे की स्त्री से। मेरा उससे बुरा सम्बन्ध हो गया !

नरेन्द्र

वह स्त्री अभी जीवित है ?

गजराज

मर गई !

नरेन्द्र

और वह लड़की ?

गजराज

वह तो है।

नरेन्द्र

यहाँ है वह इस समय ?

गजराज

यही है। यही खड़ी है। यही चम्पा!

रघुवंश

झूठ कह रहा है!

चम्पा और शत्रुसूदन एक दूसरे की ओर देखने लगते हैं।

नरेन्द्र

तुम यह बतला सकते हो गजराज, कि जिस स्त्री से चम्पा पैदा हुई थी उसकी शादी किससे हुई थी?

गजराज

ठाकुर बिहारीसिंह से।

चम्पा

अब कुछ न पूछिये स्वामीजी, अब कुछ न पूछिये। नहीं-नहीं, कुछ न पूछिये।

शत्रुसूदन

क्यों? जो सचाई है, खुल जाने दो। रोक क्यों रही हो?

चम्पा

हर्गिज़ नहीं। मैं सुनना नहीं चाहती।

शत्रुसूदन

नहीं सुनना चाहती, तो कान बन्द कर लो या यहाँ से चली जाओ।

नरेन्द्र

अच्छा, मैं अब इसे होश में लाता हूँ। अब नहीं पूछूँगा। मैं तो इसके दुःख का कारण ढूँढ़ना चाहता था।

शत्रुसूदन

स्वामीजी, इसके दुःख का कारण यही है। आज ही अभी घंटे दो घंटे पहले इसने [ चम्पा की ओर संकेत कर ] इससे कहा था कि मेरे, अपने, इसके, दीवान साहब के और नरेन्द्र के दुःख का कारण यही है; इसी गजराज के पाप का फल हम सब लोगों को एक ही साथ उठाना पड़ रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि इसका यह कहना केवल इसी बात पर लागू हो सकता है। शाम को आपके आने के पहले मुझसे भी कह चुका था।

रघुवंश

एक पहर में ही यह सब हो गया। [ नरेन्द्र की ओर देखकर ] क्यों महाराज, गजराज का कहना सच हो सकता है ? मैं तो समझता हूँ, झूठ बोल रहा है।

नरेन्द्र

दीवान साहब ! झूठ बोलना तब होता है जब आदमी अपने होश में रहकर अपनी भलाई के ख़याल से कोई बात कहता है। इस समय यह झूठ तो नहीं बोल सकता। लेकिन यह भी नहीं कहा जा सकता कि यह बिलकुल सच बोल रहा है। जो बात इसे मालूम है, अभी घड़ी दो घड़ी पहले जिस बात को यह सत्य समझता था, वही कह रहा है। [ चम्पा की ओर संकेतकर ] इनके जन्म के संबन्ध में जो बात यह जानता है, कह रहा है। [ चम्पा वहीं पृथ्वी पर बैठकर घुटनों में अपना सिर दबा लेती है ] रानी, दुःख न मानना। अगर यह बात सत्य भी है, तो इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं। अगर तुम्हें दुःख न हो तो मैं इससे और पूछूँ। देखूँ, क्या कहता है; धीरज धरो। सत्य अगर यही है तो इसका सामना करो।

शत्रुसूदन

स्वामीजी, पाँच वर्ष से इस स्त्री के साथ मैं नरक में पड़ा हूँ। लाख प्रयत्न किये, इसे प्रसन्न नहीं कर सका। सिंहिनी के सामने हाथी के बच्चे की जो हालत होती है, वही हालत इसके साथ मेरी रही है। ओह नरक! घोर नरक!

रघुवंश

राजकुमार........

नरेन्द्र

राजकुमार! यह सृष्टि ईश्वर की है और इसका आधार है दया और अनुकम्पा। और तुम तो जैसे सत्य के फकीर बने हो। यह तो कहो, उस घोर नरक का स्वागत तुमने स्वयं किया था या यह स्त्री तुम्हें उसमें खींच ले गई? स्वार्थ-बुद्धि को छोड़कर न्याय से काम लेना। स्त्री रहते हुए तुमने इससे शादी क्यों की? जो बात इसमें तब थी वही अब भी है।

शत्रुसूदन

वह बात अब नहीं है। कुल और वंश की मर्यादा एक ओर, और व्यभिचार से पैदा हुई लड़की दूसरी ओर—

नरेन्द्र

विवाह के समय तुमने कुल और वंश की मर्यादा का खयाल नहीं किया था; नहीं तो क्या जिस लड़की की हल्दी दूसरे के साथ हो गई थी उससे तुम शादी कर लेते ? देखो, इस सौ वर्ष के बुड्ढे [ रघुवंश की संकेत कर ] की ओर देखो, इसकी दुनिया तुमने उजाड़ दी। इसके हृदय से पूछो, क्या कह रहा है। यह उसी पाप का प्रायश्चित्त है और अभी बहुत दिनों तक चलता रहेगा।

चम्पा

[ उठकर ] स्वामीजी, पूछिये गजराज से। मैं भी विचार करती हूँ, इसका कहना सच मालूम हो रहा है।

नरेन्द्र

[ प्रसन्न होकर ] ठीक, इस अभागे देश की स्त्रियों को साहस करना होगा। दुर्गा बनना होगा, नहीं तो उनकी यातना का अन्त नहीं ! [ गजराज के सिर पर हाथ रखकर ] गजराज !

गजराज

[ धीमे स्वर में ] हाँ...

नरेन्द्र

चम्पा तुम्हारी लड़की है ?

गजराज

हाँ...

नरेन्द्र

तुमने अब तक क्यों नहीं कहा ?

गजराज

मारे लाज के—डर के।

नरेन्द्र

ठाकुर बिहारीसिंह को यह बात मालूम थी ?

गजराज

हाँ...

नरेन्द्र

तुम्हारे पास इस बात का कोई सबूत है ?

गजराज

हाँ...

नरेन्द्र

क्या है ?

गजराज

दुलहिनजी की एक चिट्ठी। चम्पा की शादी के बाद उन्होंने मुझे बुलाया था। लेकिन मैं लाज से नहीं गया! फिर उन्होंने मुझे समझाने के लिये वह चिट्ठी लिखी थी।

नरेन्द्र

तुम पढ़ना जानते हो ?

गजराज

थोड़ा-बहुत पढ़ लेता हूँ। उसी चिट्ठी को पढ़ने के लिये मैं सरकार से छ महीना हिन्दी पढ़ता रहा।

नरेन्द्र

तब फिर छ महीने के बाद तुमने पढ़ा ?

गजराज

तब कैसे पढ़ीं।

गजराज

तब भी ठीक-ठीक नहीं पढ़ सका ?

नरेन्द्र

एक पड़ोसी से पढ़वाया था ।

नरेन्द्र

[ शत्रुसूदन की ओर देखकर ] इसे अब होश में लाना चाहिये । नहीं तो इसके शरीर पर इसका बुरा असर पड़ेगा ।

शत्रुसूदन

अभी नहीं । यह पूछिये, वह चिट्ठी कहाँ है ?

नरेन्द्र

वह चिट्ठी कहाँ है गजराज !

गजराज

बाईं टेंट में, चुनवटी के भीतर ।

नरेन्द्र झुककर उसकी टेंट से चुनवटी निकाल लेता है । चुनवटी खोलकर लाल कपड़े में बँधी कागज की एक पुड़िया निकालता है । धीरे-धीरे पुड़िया खोलता है । आलमारी में हाथ डालकर 'चोरबत्ती' निकालता है । बायें हाथ में चिट्ठी लेकर दायें हाथ से बत्ती इधर-उधर काग़ज़ पर घुमाता है ।

नरेन्द्र

हाँ, सबूत तो काफ़ी है ।

चम्पा

[ आगे बढ़कर चिट्ठी ले लेती है ] मैं पढ़ूँगी। [ नरेन्द्र रोशनी दिखाता है, चम्पा मन-ही-मन चिट्ठी पढ़ जाती है ] अम्मा का लिखा है। तो मैं गजराज की लड़की हूँ, वह भी अधर्म की !

गजराज दो-तीन वार ज़मीन पर हाथ पटकता है। नरेन्द्र तेज़ी से उसके पास जाकर अपने दोनों हाथ, उँगलियों को हिलाते हुए, पैर की ओर से सिर की ओर को फेरता है। पाँच-सात वार हाथ घुमाने पर गजराज उठकर बैठ जाता है और चौंककर चारों ओर देखने लगता है।

चम्पा

[ गजराज का हाथ पकड़कर ] मैं तुम्हारी लड़की हूँ ?

गजराज

[ चौंककर ] कौन कहता है ?

चम्पा

अभी तुमने कहा है ?

गजराज

झूठ है, झूठ है, मैं नहीं...मैं नहीं........

चम्पा

[चिट्ठी दिखला कर] **और यह अम्मा की चिट्ठी है, जिसे तुम चुनवटी में रखे थे !**

गजराज घवड़ाकर चारों ओर देखता है। फिर हाथों में मुँह छिपा लेता है। पर्दा गिरता है।



# तीसरा अंक

वही कमरा। कुर्सियाँ उसी तरह दीवार के किनारे एक सीध में रक्खी है। चारपाई भी, जो कमरे के बीच में थी, उसी तरह बिछी पड़ी है। लेकिन वह चारपाई जो उस दरवाज़े के पास थी, जिससे होकर भीतर और ऊपरी तह में जाने का रास्ता है, वहाँ से हटा दी गई है। सामने दीवार पर घड़ी में ग्यारह बज रहे हैं। केवल पाँच मिनट की देर है।

भीतरी दरवाज़े से होकर नरेन्द्र का प्रवेश। वह सामनेवाली दीवार पर लगे हुए चित्रों को बारी-बारी देखने लगता है। वह वही रेशमी अलफ़ी पहने है। लेकिन इस समय उसके गले में जूही की एक मोटी माला है, जिसे बाँयें हाथ से उठाकर वह कभी-कभी सूँघ रहा है और उसके सिर पर नीले रङ्ग की कामदार चादर साफ़े की तरह बँधी है, जिसमें उसका बाँयाँ कान छिपा है और चादर का एक छोर बाँई ओर बगल से होकर पताके की तरह त्रिकोण बनाता हुआ नीचे को लटक रहा है। बिजली की रोशनी

में उसका कामदार अंश हिलाने के साथ ही चमक उठता है। वह एक चित्र के पास खड़ा होकर उसे ध्यान से देखने लगता है। दोनों हाथ ऊपर उठाकर चित्र पकड़ता है। फिर उसे छोड़कर एक वार चारों ओर तेज़ी से दृष्टि दौड़ाकर कमरे में देखता है और वहाँ से हटकर घड़ी के ठीक नीचे आकर खड़ा होता है। वहीं दीवार से लगी हुई कुर्सी पर चढ़कर घड़ी खोलता है और उसकी वड़ी सूई ठीक वारह के अंक पर कर देता है। घड़ी वजने लगती है। नरेन्द्र वहीं कुर्सी पर खड़ा-खड़ा घड़ी की ओर देखता रहता है।

वाहर के दरवाज़े से रघुवंशसिंह का प्रवेश। वह आगे वढ़कर नरेन्द्र जिस कुर्सी पर खड़ा है उसके पास जाकर खड़ा होता है।]

रघुवंश

घड़ी ग़लत है?

नरेन्द्र

[रघुवंश को देखकर] नहीं, मैंने पाँच मिनट बढ़ा दिया!

रघुवंश

पाँच मिनट सुस्त थी।

नरेन्द्र

सुस्त तो नहीं थी।

रघुवंश

तब क्यों ?

नरेन्द्र

यह देखने के लिये कि घड़ी में पाँच मिनट बढ़ा या घटा देने से काल तो नहीं घट-बढ़ जाता ?

। रघुवंश जैसे कुछ गम्भीर होकर नरेन्द्र की ओर देखने लगता है। नरेन्द्र उतरकर चारपाई पर आकर लेट रहता है।

रघुवंश

[ चारपाई के पास आकर ] स्वामीजी ?

नरेन्द्र चुप रहता है, कोई उत्तर नहीं देता।

आप सुन नहीं रहे हैं ?

नरेन्द्र

क्या कहा आपने ?

रघुवंश

यही कि आप सुन नहीं रहे हैं ?

नरेन्द्र

मैंने घड़ी की सूई इसलिये बढ़ा दी थी कि हम लोग

काल की सीमा घड़ी की सूई के अनुसार निश्चित करते हैं ; यह ठीक नहीं है । [ घड़ी में देखकर ] देखिये, उधर घड़ी में ग्यारह बजकर पाँच मिनट हो रहा है । आपके लिये तो यही समय है । इधर मैंने अभी पाँच मिनट बढ़ा दिया है तो मेरे लिये अभी ग्याहर बजा है । अगर कोई और भी घटाये-बढ़ाये हो तो समय कुछ और होगा। अब यह घटती-बढ़ती घड़ी में है, इस घटती-बढ़ती का प्रभाव काल पर तो पड़ता नहीं ।

[ रघुवंश की ओर ध्यान से देखने लगता है । रघुवंश भी उसकी ओर देखते हैं—नरेन्द्र एकाएक चारपाई से उठकर एक कुर्सी उठाकर चारपाई के पास रख देता है, और रघुवंश का हाथ पकड़ लेता है । ] आप बैठिये इस कुर्सी पर ।

रघुवंश

[ झटके से हाथ छुड़ाकर कई कदम पीछे हटकर ] नहीं-नहीं महाराज, ऐसा क्या ? आपसे कुर्सी उठवाकर उसपर बैठूँ ? [ ऊपर हाथ उठाकर ] वहाँ क्या जवाब दूँगा ?

नरेन्द्र

[ असमंजस के स्वर में ] आप वृद्ध हैं। आपके लिये कोई दोष नहीं होगा।

रघुवंश

वृद्ध तो हूँ—लेकिन माया के कुंड में जो हूँ ?

नरेन्द्र

लेकिन माया के कुंड में ही सारा जगत् है। योगी, तपस्वी, पंडित, गृहस्थ; सब कोई। आप क्या समझते हैं कि मैं माया जीत चुका हूँ ? [ अलफ़ी पकड़कर ] यह माया नहीं है ? [ माला पकड़कर ] यह माया नहीं है? [ पगड़ी छूकर ] और यह भी तो माया है ? [ रघुवंश गंभीर होकर नरेन्द्र की ओर चुपचाप देखने लगता है ] आप किस विचार में पड़े हैं ?

रघुवंश

स्वामीजी, मेरा एक लड़का था।

नरेन्द्र

जानता हूँ...सुन चुका हूँ। शत्रुसूदन ने सब कुछ कह दिया। चम्पा से उसकी शादी तय हो चुकी थी—दोनों ओर हल्दी भी हो गई थी।

रघुवंश

जी हाँ...

नरेन्द्र

[ रघुवंश का हाथ पकड़कर ] मैं कहता हूँ—बैठिये इस कुर्सी पर। बैठिये, और कुछ नहीं तो मेरा कहा तो मानना होगा आपको। [ रघुवंश कुर्सी पर बैठता है, नरेन्द्र चारपाई पर लेटकर तकिया दुहरी कर सिर के नीचे रख लेता है ] घड़ी दो घड़ी में यह संसार बदल गया। गजराज, चम्पा, शत्रुसूदन, मैं, आप; सब बदल गये। कोई भी वह नहीं रहा। गजराज है कहाँ...?

रघुवंश

वहीं बैठा है। बहुत कहा...उठता ही नहीं।

नरेन्द्र

समुद्र में डूब गया था। यह तो उसका पुनर्जन्म है। उसकी बीमारी निकल गई।

रघुवंश

बीमार तो वह नहीं था।

नरेन्द्र

[ मुस्कराकर ] उसकी बीमारी तो राजरोग थी। और

वह भी इस बात को जानता था कि उसकी कोई दवा नहीं है। भय और सन्देह, पश्चात्ताप और प्रायश्चित्त की आग धीरे-धीरे सुलग रही थी········उसका हृदय उसकी आत्मा की गंगा के किनारे श्मशान था। उसकी तो मुक्ति हो गई। अब तक तो वह भागता रहा। उसकी अपनी ही छाया उसके लिये भूत थी। अब वह साहस के साथ खड़ा होगा। पापी अपना पाप छिपाने में अनेक पाप करता है; और जब छिपाने का अवसर नहीं रहता, वह ऊपर देखता है—उसका बोझ हलका हो जाता है और वह नई यात्रा आरंभ करता है।

[ रघुवंश की ओर ध्यान से देखते हुए ] समझ रहे हैं कि नहीं आप ? न्याय कचहरी में नहीं होता। मनुष्य की अदालत जिसे दंड देती है उसे सदैव के लिये अपराधी बना देती है। न्याय तो वास्तव में होता है मनुष्य के हृदय में, और विचारक का काम करती है स्वतः उसकी आत्मा। दुनिया की अदालतें तो केवल अपराध बनाने के लिये बनी हैं। गजराज का न्याय उसकी आत्मा ने कर दिया। वह अब निर्दोष है।

रघुवंश

निर्दोष है ? स्वामीजी !

नरेन्द्र

[ उठकर बैठते हुए ] जी हाँ—उसका प्रायश्चित्त भी हो गया।

रघुवंश

प्रायश्चित्त कब किया?

नरेन्द्र

चौबीस वर्ष तक बराबर। कोई पता न पावे। भय, आशंका, सन्देह। सब किसीसे डरना—किसीके सामने सिर न उठाना। यह [ सिर हिलाकर ] साधारण प्रायश्चित्त है? इस प्रायश्चित्त का यज्ञ आज समाप्त भी हो गया। उसका पाप उसका न होकर आज सारे जगत् का हो गया।

रघुवंश

मुझे तो उसपर दया आ रही है।

नरेन्द्र

हर किसीको, जिसके पास मनुष्य का हृदय होगा, उस पर दया आयेगी।

रघुवंश

[ उठकर ] मैं तो जा रहा हूँ फिर समझाने। उसे दुनिया छोड़ दे, लेकिन मैं तो नहीं छोड़ सकता। बुराई से तो कोई नहीं बचा—अकेले भगवान को छोड़कर।

रघुवंश का प्रस्थान। नरेन्द्र उठकर जिस चित्र को देर तक देखता रहा है वहाँ जाकर फिर खड़ा होता है, और उसे फिर ध्यान से देखने लगता है। अपने गले की माला निकालकर, जिस पीतल की कील में चित्र लगा है उसीपर, डाल देता है। माला चित्र के शीशे पर फैल जाती है। नरेन्द्र लौटकर चारपाई पर लेट रहता है तथा माला और चित्र की ओर देखने लगता है।

भीतरवाले दरवाज़े से चम्पा और उसके पीछे शत्रुसूदन का प्रवेश।

चम्पा

[ नरेन्द्र की ओर देखकर ] तो मुझे सचमुच आत्महत्या करनी पड़ेगी ?

नरेन्द्र

[ शत्रुसूदन की ओर देखते हुए ] राजकुमार !

शत्रुसूदन

[ सहमकर ] देखिये, यही इसकी मनोवृत्ति है।

चम्पा

[ गम्भीर होकर ] मुझे...आत्महत्या तो करनी पड़ेगी।

नरेन्द्र

[ मुस्कुराकर ] लेकिन किस लिये ?

चम्पा

इस जीवन का अन्त करने के लिये—जिसके साथ लांछन, अपमान, अवहेलना और...

नरेन्द्र

और क्या ?

चम्पा

जो अपराध मेरा नहीं उसे मेरे सिर मढ़ना !

नरेन्द्र

[ शत्रुसूदन की ओर देखते हुए ] राजकुमार...

शत्रुसूदन

[ सिर नीचे कर ] जी...

नरेन्द्र

तुम...

शत्रुसूदन

इसके भीतर इसकी माता का रक्त है।

नरेन्द्र

[ धीमे स्वर में ] किसी...डाक्टर से ऑपरेशन कराकर निकलवा दो। बस इतने ही में समस्या सुलझ जाती है।

शत्रुसूदन

[ जैसे बहुत साहस कर ] यह हँसी का अवसर नहीं है।

नरेन्द्र

[ चौंककर उठते हुए ] क्या बात ? कहीं ज्वालामुखी तो नहीं भड़क पड़ा, या भूडोल आ गया है जिससे इस मकान के गिरने का सन्देह है! मुझे तो हँसी करना ही है राजकुमार, तुम्हारी मूर्खता पर। इतना तो तुम जानते ही होगे कि तुम्हारा दबाव मुझपर नहीं है। रही इस स्त्री की बात, तुमने इससे शादी की है। तुम, गजराज और यह, तुम तीनों एक ही नाव में बैठे हो, बुद्धि से काम लो। नाव के साथ तुम भी डूब जाओगे। तुम्हारी बुद्धिमानी इसीमें है कि नाव न डूबने पाये। और चम्पा, तुम भी

अपना स्वभाव बदल दो। राजकुमार तुम्हारे स्वामी हैं, तुम्हें अपने व्यक्तित्व को इनके भीतर मिला देना चाहिये। तुम्हारी पृथक् सत्ता मिट जानी चाहिये।

शत्रुसूदन

स्वामीजी...

नरेन्द्र

हाँ।

शत्रुसूदन

चम्पा ने मेरे हृदय को बार-बार...

नरेन्द्र

हाँ कहो......

शत्रुसूदन एकाएक चुप होकर नीचे धरती की ओर देखने लगता है। चम्पा और नरेन्द्र की चार आँखें होती हैं।

नरेन्द्र

राजकुमार! चम्पा और गजराज की परीक्षा हो चुकी। अब तो तुम्हारी...

शत्रुसूदन

लेकिन मेरी परीक्षा की ज़रूरत क्या है? और न मैं इसके लिये तैयार हूँ।

नरेन्द्र

हूँ, तो तुम कायर हो [ शत्रुसूदन की ओर देखकर ] कायर... कायर...

शत्रुसूदन

ऐसी वीरता तो सिद्धांत और संस्कार के प्रतिकूल है।

नरेन्द्र

कैसी वीरता ?

शत्रुसूदन

वही जिसे आप आदर्श समझते हैं।

नरेन्द्र

मैं जिसे आदर्श समझता हूँ वह तुम्हारे घड़ी-दो-घड़ी का विनोद, दिलवहलाव नहीं, जिसे तुम नहीं देखते—जिसकी ओर से तुम्हारी आँखें बन्द हैं, जिसके लिये तुम अन्धे हो, लेकिन जो तुम्हारा आधार है।

शत्रुसूदन

मेरा आधार है—मेरा व्यक्तिगत संस्कार और मेरे वंश की मर्यादा।

नरेन्द्र

हर्गिज़ नहीं। तुम्हारा आधार है तुम्हारी मनुष्यता। तुम्हारी आत्मा भूखी है, उसे भोजन दो। घड़ी-भर के लिये अपनी आत्मा को चम्पा के शरीर में आने दो, और चम्पा की आत्मा को अपने शरीर में जाने दो; और देखो व्यक्तिगत संस्कार और वंश की मर्यादा कहाँ रहती है।

शत्रुसूदन

लेकिन किस लिये ?

नरेन्द्र

अपनी मनुष्यता को जगाने के लिये, अपनी आत्मा को नीरोग और स्वस्थ बनाने के लिये। अगर अब भी न समझे तो मैं समझूँगा कि तुम्हारा संस्कार साबुन और सिगरेट का है; कुर्ता, धोती और चट्टी का है। संस्कार का अर्थ है राक्षस का शासन और देवता की पूजा। राक्षस के शृंगार को तुमने अपना संस्कार बना लिया है।

शत्रुसूदन

स्वामीजी...मैं योगी नहीं।

नरेन्द्र

लेकिन योगी मनुष्यता का लांछन नहीं है। तुम योगी नहीं हो, इसीलिये इतने दुखी हो। [ उसकी ओर ध्यान से देखने लगता है ]

शत्रुसूदन

[ नीचे देखते हुए ] मैंने इसलिये नहीं कहा कि आप रुष्ट हो जायँ।

नरेन्द्र

देखो इधर...

शत्रुसूदन

[ नीचे की ओर देखते हुए ] कहिये !

नरेन्द्र

इधर देखो भी...

शत्रुसूदन

मैं आपसे प्रार्थना करूँगा कि अपनी सिद्धियों का प्रयोग आप मुझपर न करें।

नरेन्द्र

[ कुछ सोचते हुए ] राजकुमार, मैं तो चाहता था कि तुम भी साधक बन जाते।

शत्रुसूदन

और रतनपुर...?

नरेन्द्र

क्या मतलब ?

शत्रुसूदन

यही कि रियासत का काम कौन करता !

नरेन्द्र

रियासत का काम भी तुम कुछ कर लेते हो ? मैं तो नहीं समझता··· ।

शत्रुसूदन

ज़रूर करता हूँ; अन्यथा शासन चल कैसे रहा है ?

नरेन्द्र

हूँ—अच्छा, माना । यह तो कहो, रियासत में बाढ़ और दुर्भिक्ष से कितने आदमी इस वर्ष मरे हैं ? पिछले बारह महीनों में कितनी हत्याएँ और कितनी चोरियाँ हुई हैं ?

शत्रुसूदन

आफ़िस से पूछकर बतला सकूँगा ।

नरेन्द्र

तब शासन आफ़िस के भरोसे चल रहा है। तुम्हारा हाथ तब माना जाता कि तुम प्रजा की ज़िन्दगी के उत्तरदायी रहते, कम-से-कम तुम्हें इस बात का तो पूरा पता होता कि बाढ़ और दुर्भिक्ष से तुम्हारी कितनी प्रजा मरी और कितनी हत्याएँ हुईं ? लेकिन तुमने तो अपने दीवान को इस बात पर निकाल दिया कि पुश्तैनी नौकरी तुम्हें सिद्धान्त के प्रतिकूल जँचती है। साठ वर्षों तक जिसने रियासत के प्रबन्ध में अपना व्यक्तित्व मिटा डाला—वह आज तुम्हारे लिये अयोग्य हो गया !

शत्रुसूदन

देखते नहीं हैं, वह कितने वृद्ध हो गये हैं ?

नरेन्द्र

बस वृद्ध होना ही उनकी अयोग्यता हो गई या कहीं कर्त्तृत्व-शक्ति में भी उन्होंने कमज़ोरी दिखलाई है ? राजा होने का अधिकार उसे है जिसके मन में प्रजा का भाव हो, जो प्रजा के लिये कुछ कर सके; और इस कसौटी पर

दीवान रघुवंशसिंह को राजा होना चाहिये—न कि तुम्हें। तर्क मत करो, प्रतिवाद मत करो; अपनी आत्मा से पूछो—मैं सच कह रहा हूँ या झूठ। तुम्हारे भीतर जो ईश्वर है, जो देवता है—उससे पूछो।

चम्पा दीवार की ओर देखती है। चित्र के ऊपर माला देखकर तेज़ी से बढ़ती है और वहीं दीवार के पास रखी हुई कुर्सी पर चढ़कर माला उतारकर पहन लेती है। शत्रुसूदन उसकी ओर क्रोध से देखता है। नरेन्द्र का बाहरी दरवाज़े से प्रस्थान।

शत्रुसूदन

माला पहनने की तबीयत चल गई!

चम्पा

मेरी तस्वीर पर पड़ी थी।

शत्रुसूदन

वह तो मैंने देखा, और इन स्वामीजी ने रखा था।

चम्पा

किसने रक्खा, यह तो मैं नहीं जानती। फूल की माला है, जूही के फूल इस गर्मी में कितने अलभ्य हैं! [शत्रुसूदन के पास जाकर माला निकालकर हाँथों में लेती हुई] तुम्हें पहना दूँ?

शत्रुसूदन

मुझे ? लेकिन तुम्हारी माला अब मेरे योग्य नहीं है। तुम इस लायक़ नहीं। पीछे हटो। कहे देता हूँ, मेरा शरीर न छूना !

चम्पा

यह ज्ञान उसी दिन क्यों नहीं हुआ ?

शत्रुसूदन

किस दिन ?

चम्पा

जिस दिन मुझसे विवाह किया। तब मैं पवित्र थी और आज अपवित्र हो गई हूँ ?

शत्रुसूदन

बहस मत करो। मैं तुम्हें ठाकुर बिहारीसिंह की लड़की समझता था—मुझे क्या मालूम था कि तुम्हारा रक्त अशुद्ध है। वह मेरे योग्य—मेरी वंश-मर्यादा के योग्य नहीं।

चम्पा

[ माला को अपनी दाईं कलाई में कंकण की तरह लपेटकर ] लेकिन मैं फिर पूछती हूँ, इसमें मेरा क्या अपराध है ?

शत्रुसूदन

माला के साथ खिलवाड़ कर लो, अपना श्रृङ्गार पूरा कर लो, तब पूछो।

चम्पा

[ अपने सिर पर हाथ रखकर ] मेरा श्रृङ्गार यह...यह सिंदूर है, और यह तुम्हारा है। तुम्हारे पास इतना साहस तो है नहीं कि मुझे छोड़ दो। मुझे स्वतन्त्र कर दो। बड़ी रानी से असन्तुष्ट होकर मुझे पकड़ लाये और अब किसी और को पकड़ लाओगे। एक की जगह दो रानियाँ हुईं, अब तीन होंगी !

शत्रुसूदन

लेकिन तब यह दम्भ नहीं रह जायेगा।

चम्पा

[ मुस्कुराकर ] मैंने दम्भ तो कभी नहीं किया।

शत्रुसूदन

कभी नहीं ?

चम्पा

कभी नहीं। पाँच वर्ष बीत गये। कभी आपके पहले न भोजन किया, न शयन किया। आपसे कभी न तो किसी तरह का आग्रह किया और न कोई उपालम्भ। आज्ञा भी जब हुई, जो हुई, जैसी हुई [ एकाएक चुप हो जाती है ]

शत्रुसूदन

हाँ, कहो।

चम्पा

[ कंठ पर हाथ रखकर ] शब्द यहाँ आकर रुक जाते हैं, बाहर निकलना नहीं चाहते।

वहीं फर्श पर बैठकर एकटक शत्रुसूदन की ओर देखने लगती है।

शत्रुसूदन

[ अवहेलना के स्वर में ] तुम्हारे नेत्र मेरे पैरों की ओर रहे—हाँ...सही है...लेकिन तुम्हारा हृदय...[ अँगड़ाई लेता है ]



चम्पा

[ उसी तरह बैठी हुई ] उसमें भी मेरा दोष नहीं। मैं कोशिश तो करती रही। अपनी ओर से मैंने कुछ उठा नहीं रखा।

शत्रुसूदन

[ रूखे स्वर में ] झूठ बोल रही है।

चम्पा

शायद...

शत्रुसूदन

शायद नहीं, सच। झूठ बोल...

चम्पा

अब बहुत हुआ...

शत्रुसूदन

बहुत हुआ ? तेरे हाथ जल पीना भी...

चम्पा

क्यों नहीं ? होटलों की मिस लोगों से भी मेरा...

शत्रुसूदन

[ डाँटकर ] चुप रहो। वेहया......

चम्पा

[ उठकर वाहर जाती हुई ] किस अपराध...

शत्रुसूदन

कहाँ चले ?

चम्पा

बाहर...

शत्रुसूदन

किस लिये ?

चम्पा

गजराज से पूछने...देखूँ !

शत्रुसूदन

क्या पूछने ?

चम्पा

अपना निर्वाह ! कैसे होगा ? किस तरह होगा ?

शत्रुसूदन

इसका मतलब ?

चम्पा

मैं इस नरक में तो नहीं रह सकती।

शत्रुसूदन

लेकिन गजराज कब का लखपती है?

चम्पा

[ उद्वेग के स्वर में सिर हिलाती हुई ] लखपती नहीं········ भिखारी सही। स्त्री के लिये दो ही जगहें हैं, पिता का घर या पति का घर········तीसरा घर न तो कहीं है, न बनाया जा सकता है; इसके लिये साहस करना तो पाप और भ्रष्टाचार है। पुरुष कहीं भी रहें—आकाश, पाताल, मर्त्य-लोक—उनके लिये सभी रास्ते खुले हैं।

शत्रुसूदन

बन्द कर दो········

चम्पा

बन्द क्या कर दूँ? मैं भी चल पड़ूँ उन्हीं रास्तों से··· मैं क्यों रुकूँ?

शत्रुसूदन

तुम्हें रोकता कौन है ?

चम्पा

तुम—तुम्हारी मर्यादा !

शत्रुसूदन

बिलकुल नहीं ।

चम्पा

[ उसकी ओर देखकर ] सच कह रहे हो ?

शत्रुसूदन

कोई दिन था चम्पा, जब मैं तुम्हें अपने हृदय में रख लेना चाहता था !

चम्पा

लेकिन आज मैंने कौन-सा अपराध किया ?

शत्रुसूदन

पाँच वर्षों के भीतर तुमने कभी भी मुझे प्रेम से…

चम्पा

मैंने सदैव श्रद्धा और सम्मान के साथ आत्मसमर्पण किया था!

शत्रुसूदन

श्रद्धा और सम्मान के साथ; लेकिन प्रेम के साथ नहीं।

चम्पा

मैं अपनेको निर्दोष तो नहीं कह रही हूँ, लेकिन उसमें भी मेरा अपराध नहीं है। विवाह होने के पहले ही मेरा जीवन बिगड़ चुका था। यह अपराध मेरा नहीं—उन लोगों का था जिन्होंने मुझे पढ़ने के लिये कालेज में भेज दिया—बाल-विवाह की कुरीतियों को मिटाने के लिये जिन्होंने आदर्श की वेदी पर मेरा बलिदान कर दिया। पढ़ाई के दिनों में ही [ छाती पर हाथ रखकर ] हृदय उलझ गया। स्त्री के जीवन में सोलह वर्ष की अवस्था से लेकर बीस वर्ष की अवस्था तक—यह चार वर्षों का काल—तो सपने का होता है; कल्पना का इन्द्रधनुष सहस्र रंगों में रँग उठता था। उन्हीं दिनों में प्रलय की वह सुंदर घड़ी आई। [ एकाएक चुप हो जाती है ]

शत्रुसूदन

[ गंभीर होकर ] हाँ······तब ?

चम्पा

[उसकी ओर देखकर और दोनों हाथों की उँगलियाँ बालों में छिपाकर] तब······तब······तब मैं उनसे प्रेम करने लगी। यह सब कैसे हुआ, क्यों हुआ, मैं समझ न सकी। उनके साथ नित्य सिनेमा देखने जाया करती थी। रोशनी बुझ जाने पर पहले दर्जे में प्रायः केवल हम दोनों बैठे रहते थे। सिनेमा के दृश्यों से रोमांच हो जाता था, नसों में बिजली दौड़ जाती थी, मुझे होश नहीं रहता था। इतना मैं कह सकती हूँ, वह पूरे संयम के साथ······और इसी कारण पश्चात्ताप के लिये कोई विशेष परिस्थिति नहीं पैदा हो सकी।

शत्रुसूदन

सचमुच ?

चम्पा

हाँ, लेकिन इसका श्रेय उनको है······मुझे नहीं।

शत्रुसूदन

[ गम्भीर होकर कुछ सोचने लगता है ] लेकिन तुम्हें तो ऊँची शिक्षा मिली थी। तुमने इस बात को व्यक्त क्यों नहीं किया ?

चम्पा

यह पुरुष से हो सकता है; लेकिन स्त्री के लिये नहीं। पुरुष के लिये तो यह पौरुष हो उठता है; लेकिन स्त्री का तो यह चिरन्तन पाप है। यह तो मेरा पाप था न ? इसी लिये मेरे जीवन ने उसके लिये आज्ञा नहीं दी। मैंने एक पत्र आपको लिखा, टिकट भी लगा दिया; लेकिन डाकख़ाने मे छोड़ नहीं सकी।

शत्रुसूदन

किस लिये ?

चम्पा

यही बतलाने के लिये कि मैं आपके योग्य नहीं थी।

शत्रुसूदन

हूँ—तब ? [ चम्पा उसकी ओर चुपचाप एकटक देखने लगती है] लेकिन अब तो ?

चम्पा

बौद्धिक विकास के लिये यह युग प्रसिद्ध है। विश्व-विद्यालय में वैयक्तिक स्वतन्त्रता और वैयक्तिक आचरण पर ज़ोर दिया जाता है।

शत्रुसूदन

आदर्श सदैव जीवन के प्रतिकूल है।

चम्पा

मैं आपके सम्मान और मर्यादा की रक्षा करना चाहती हूँ।

शत्रुसूदन

लेकिन अब तो यह हो नहीं सकता। तुम्हारे जन्म की कथा जानकर मैं तुम्हें स्त्री-रूप में तो रख नहीं सकता। आज दो-चार जानते हैं, कल दुनिया जान जायगी।

चम्पा

स्त्री-रूप में न सही।

शत्रुसूदन

तब किस रूप में ?

चम्पा

क्यों, राजमहल मे कई दासियाँ हैं।

शत्रुसूदन

वाह ! स्त्री नहीं तो दासी। लेकिन लोग यह समझेंगे कैसे ? भगवान रामचंद्र को सीता का निर्वासन करना पड़ा था। लोकमत ऐसी चीज़ है।

चम्पा

मैं तो किसी रावण के साथ नहीं रही।

शत्रुसूदन

क्यों नरेन्द्र !

नरेन्द्र का सहसा प्रवेश।

नरेन्द्र

तो इस बेचारी का त्याग इस लिये नहीं होगा कि यह गजराज की लड़की है और वह भी प्रणाली-हीन, बल्कि इस लिये कि यह नरेन्द्र के साथ थी।

शत्रुसूदन

स्वामीजी, चाहिये तो नहीं; लेकिन वाध्य होकर मुझे कहना पड़ रहा है कि आप सीमा का अतिक्रमण कर रहे हैं।

नरेन्द्र

[ अलफ़ी उठाकर ] इसी लिये तो इस वेश में, इस जीवन में, हूँ। मुझे भी कभी कोट-कमीज़ शेरवानी-पाजामा का शौक़ था।
[ चम्पा की ओर देखता है, चम्पा धरती की ओर देखने लगती है ]

शत्रुसूदन

कोट-कमीज़ शेरवानी-पाजामे का क्या मतलब ?

नरेन्द्र

तुम्हारी सीमा ! तुमने राजयोगी को इतना वड़ा उपालम्भ··[ कई बार सिर हिलाकर ] तुम्हारे पास इतनी समझ भी नहीं है कि अगर मुझे सीमा के भीतर ही रहना होता तो मैं योग की साधना में क्यों अपनी ज़िन्दगी...[ एकाएक रुककर कुछ सोचने लगता है ] राजकुमार, मैं तुमसे अवस्था में भी छोटा हूँ; प्रयाग-विश्व-विद्यालय का एम. ए. एल-एल. बी.

हूँ। [ हाथ घुमाकर वृत्त बनाते हुए ] मैं भी आज इसी तरह आलीशान इमारत में रहता। मेरी भी शादी हुई होती। मेरे हृदय में भी कवित्व, मेरी वाणी में भी संगीत, मेरी आँखों में भी बिजली, मेरे हाथों में भी कौशल, मैं भी कभी पुरुषों की ईर्ष्या और स्त्रियों के प्रलोभन का कारण होता; लेकिन इसीलिये—केवल सीमा को पार कर जाने के लिये मैंने इतना छोड़ दिया......इतना जिसकी कल्पना भी तुम्हें असह्य होगी—जिसकी धारणा भी तुम नहीं सम्हाल सकते।

शत्रुसूदन

अपनी सीमा को पार कर जाना और संसार के व्यवहार की सीमा को पार कर जाना एक ही बात नहीं है।

नरेन्द्र

बिल्कुल एक ही बात है। संसार की सीमा तो अपनी सीमा के भीतर है। संसार की सत्ता तुम अपनेसे पृथक् समझते हो, लेकिन यह तुम्हारा भ्रम है।

शत्रुसूदन

भ्रम...

नरेन्द्र

हाँ, भ्रम। तुम्हारा सुख-दुख केवल तुम्हारा नहीं, सारे जगत् का है। अपनी सत्ता संसार की सत्ता में मिल जाने तो दो। समुद्र के एक घड़े जल में समुद्र का रूप न देखना चाहो, सारे समुद्र की ओर देखो।

शत्रुसूदन

उहँ, ज्ञान इस तरह होता नहीं......

नरेन्द्र

ज्ञान की ओर से मुँह फेर लेना अच्छा होता भी है। तुम्हारे ऐसे सपनों में मरने-जीनेवालों के लिये यही अच्छा है। ज्ञान के मार्ग में पहले अशांति जो होती है। लेकिन यहाँ तो ज्ञान की कोई बात नहीं है शत्रुसूदन!

शत्रुसूदन

तब क्या है?

नरेन्द्र

मैं तो इसे केवल आँख खोलकर चलना कहूँगा, जो सभी करना चाहते हैं। तुम भी यही करो।

शत्रुसूदन

[ एकाएक कमरे में टहलते हुए ] स्वामीजी...

नरेन्द्र

हाँ...

शत्रुसूदन

यह समय तो हर्गिज़ बहस का नहीं है।

नरेन्द्र

[ मुस्कराते हुए ] बहुत सुन्दर। मालूम होता है, अब दुनिया ऊपर को उठेगी। चम्पा, अब तो तुम्हारी समस्या सुलझ गई न ?

चम्पा

मेरी समस्या सुलझ गई ? कब स्वामीजी, और कहाँ ?

नरेन्द्र

राजकुमार [ शत्रुसूदन की ओर देखकर ] अब समझ गये। बहस व्यर्थ है। राजकुमार इस बात को मान गये।

शत्रुसूदन

तो...

नरेन्द्र

क्यों जी, अभी 'तो' लगा हुआ है ?

शत्रुसूदन

वह तो लगा ही रहेगा, भला कैसे न—

नरेन्द्र

[ शत्रुसूदन के कन्धे पर हाथ रखकर ] फिर प्रारम्भ करो... नवीन आरम्भ। नरेन्द्र, चम्पा, गजराज, बूढ़े दीवान, सबके साथ आरम्भ, नवीन आरम्भ! सब लोग गंगा-स्नान करने चलो, स्नान के बाद सबके साथ फिर नये सिरे से सम्बन्ध पैदा किया जाय ?

शत्रुसूदन

नया सम्बन्ध पैदा किया जाय ? इसी जीवन में ?

नरेन्द्र

हाँ, इसी जीवन में। यह जीवन भी नया किया जा सकता है।

शत्रुसूदन

वह कैसे ?

नरेन्द्र

इसके पिछले धब्बे धो दिये जायँ, पिछली जँजीरें काटकर फेंक दी जायँ। यह अपने मन में मान लिया जाय कि हमलोगों का जन्म आज हो रहा है, हम पहले नहीं थे; जो कुछ था, हमारा भूत था; इस धरती पर हम आज उतरे हैं और आज ही से हमलोगों को अपनी यात्रा प्रारम्भ करनी है। इस तरह केवल गजराज और चम्पा के साथ ही नहीं, बल्कि बूढ़े दीवान और नरेन्द्र से भी तुम्हारा समझौता हो जायगा और इस प्रकार तुम राजपद के लिये उपयुक्त होगे।

चम्पा

दुनिया ऊपर उठे या न उठे; लेकिन स्वर्ग तो नीचे आ रहा है।

शत्रुसूदन

[ हँसते हुए ] तुम... [ उसकी ओर देखने लगता है ]

चम्पा

लेकिन, अगर मैंने झूठ कहा हो तो उपनिषद्-काल के ऋषियों की तरह मेरा सिर कन्धे से उतर जाय। [सिर हिलाकर] अभी गिरा तो नहीं।

नरेन्द्र

तो तुम तैयार हो नये प्रारम्भ के लिये ?

शत्रुसूदन

अच्छा तो होता, लेकिन...

चम्पा

लेकिन...स्वर्ग के रास्ते की सबसे बड़ी खाई।

नरेन्द्र

[ कुछ सोचकर ] देखो...लेकिन तो भ्रम के साथ ही साथ विश्वास भी मिटा देता है, और जिस बुद्धि का दावा करता है उसके साथ भी दूर तक नहीं जा सकता।

चम्पा

बुद्धि का काम तो अब तक केवल सो जाना था— इसने चलना कब से प्रारम्भ कर दिया ?

नरेन्द्र

[ चम्पा की ओर देखकर ] तो तुम अब दार्शनिकता छोड़कर विनोद की ओर बढ़ रही हो ! क्यों, ठीक न ? परिवर्त्तन तो उपयोगी है।

चम्पा

मुझे इन दोनों चीज़ों में विशेष अन्तर नहीं देख पड़ता। [ शत्रुसूदन की ओर संकेत कर ] जब सरकार की मुझपर कृपा थी, पवित्रता और मर्यादा की कसौटी पर जब मैं चमक उठती थी—तब तो मुझे दार्शनिकता सूझती थी ; और आज जब सब जगह से गिर पड़ी हूँ, मुझे विनोद...

नरेन्द्र

सब जगह से कैसे गिर पड़ी हो ?

चम्पा

सब जगह से गिर पड़ी हूँ स्वामीजी, इसी लिये हँसना चाहती हूँ; और अब हँसूँगी अपने दम्भ पर और संसार की समस्या पर। मेरा हृदय चीर दिया गया—जीवन की

छुरी उसके आरपार हो गई। रक्त निष्फल न जाय, इस लिये मैं उसे पिचकारी में खींचकर शून्य के साथ होली खेलने जा रही हूँ। [माला अपने सिरपर रखती है, जो सामने की ओर भौंह से सटी हुई पीछे की ओर लटक रही है]

नरेन्द्र

[उसकी ओर ध्यान से देखते हुए] तुम्हारा मतलब क्या है चम्पा ?

चम्पा

मैं तो हँसना चाहती हूँ !

शत्रुसूदन

मैं तुम्हें मना नहीं करता। स्वामीजी, है सम्भव नया प्रारम्भ ?

चम्पा

प्रारम्भ नया हो या पुराना, स्त्री सदैव पुरुष का नाश करती रहेगी और पुरुष स्त्री का। यह विरोध चिरन्तन है—

सुनु मुनि कह पुरान स्रुति संता ।
मोह बिपिन कर नारि बसन्ता ॥

अगर किसी स्त्री को लिखना होता तो वह ठीक इसका उलटा लिखती । स्त्री का मोह पुरुष है और पुरुष का स्त्री ।

नरेन्द्र

लेकिन तुम्हारे यह सब कहने का मतलब ? हाँ, कहो ।

चम्पा

यही कि आपके साथ, दीवान साहब के साथ और गजराज के साथ भी नया प्रारम्भ–नया समझौता–हो सकता है; लेकिन मेरे साथ—मेरे साथ न तो कोई नया प्रारम्भ हो सकता है और न नया समझौता !

शत्रुसूदन उसकी ओर क्रोध और अवहेलना से देखता है ।

नरेन्द्र

क्यों ?

चम्पा

इसीलिये कि मैं स्त्री हूँ, स्वामीजी !

नरेन्द्र

अच्छा तब ?

चम्पा

किया है कभी किसी स्त्री ने भी समझौता ? हर-एक समझौते का उद्देश्य होता है—स्वार्थ और रक्षा······स्त्री का कोई स्वार्थ तो होता नहीं; और जब से यह सृष्टि है, स्त्री की रक्षा भी कभी नहीं हुई। जब तक जूता नया रहता है, चमक निकलती रहती है; तबीयत चाहती है, उसी-को देखा करें। दिन में दो-चार बार साफ़ करने की ज़रूरत रहती है, लेकिन बस महीना दो महीना······उसके बाद—कुछ दिन और पैरों से इधर-उधर कर पहन लेना और उसके बाद······यही हालत स्त्री की है। जब तक वह आँखों में चकाचौंध और धमनियों में बिजली पैदा कर सकती है, वह पहेली है, समस्या है, फूल है, स्वप्न है, अनन्त प्रेम और अनन्त सुख है; लेकिन जब ज्वार उतार पर होता है, जब चंद्रमा की क्षीण कला अमावस्या की ओर बढ़ती है, जब आनन्द लुप्त होने लगता है—उसका अस्थिपञ्जर···अपमान और अवहेलना...इसी तरह एक दिन उसकी कथा समाप्त हो जाती है। वह कहाँ थी ?

इसका पता भी पीछे नहीं चलता; क्योंकि उसकी कोई अपनी जगह तो होती नहीं, जो सूनी देख पड़े।

शत्रुसूदन

सुनियेगा और व्याख्यान? कह सकेंगे आप कि किसी स्त्री के मुख से इससे ज्यादा विष निकल सकेगा?

नरेन्द्र

[मुस्कराकर] लेकिन इसे विष ही क्यों मान लिया जाय? विचार—विष हो सकता है और अमृत भी।

शत्रुसूदन

अच्छा, तो यह अमृत है?

नरेन्द्र

मैं तो समझता हूँ, यहाँ विष और अमृत दोनों मिल गये हैं। यहीं से नया प्रारम्भ होना चाहिये। समझौते की नींव पड़ गई!

शत्रुसूदन

तो आप व्यंग कर रहे हैं?

नरेन्द्र

चम्पा ने भी तो व्यंग ही किया था। अब तुम व्यंग कर दो। समझौता हुआ ही है।

गजराज का प्रवेश। गजराज की आकृति गंभीर और कठोर हो रही है। वह आगे बढ़कर नरेन्द्र का पैर छूकर प्रणाम करता है और फिर लौट पड़ता है।

नरेन्द्र

कहाँ जा रहे हो जी ?

गजराज

[ घूमकर ] दीवान रघुवंशसिंह के साथ जा रहा हूँ। हम लोग साथ ही रहेंगे। [ लौटकर फिर आगे बढ़ता है। चम्पा उसकी ओर देखने लगती है ]

नरेन्द्र

सुनो तो, इतनी जल्दी क्यों कर रहे हो ?

गजराज

देर हो रही है। पार जाने के लिये नाव नहीं मिलेगी। वह सड़क के आगे निकल गये हैं।

नरेन्द्र

कौन, दीवान साहब ?

गजराज

हाँ······।

नरेन्द्र

[ शत्रुसूदन से ] सचमुच बुड्ढे को छोड़ रहे हो जी ?

शत्रुसूदन

मैंने तो उनको नहीं छोड़ा। वह स्वयं······[ गजराज से ] कहाँ तक गये होंगे जी ?

गजराज

पुल तक गये होंगे।

शत्रुसूदन

अभी ठहरो। मैं उन्हें लिवा लाऊँ; शायद [ प्रस्थान ]

नरेन्द्र

गजराज, क्या होगा ?

गजराज

होगा क्या स्वामीजी ? जैसे दुनिया चलती रही है, चलेगी। [ प्रस्थान ]

नरेन्द्र चारपाई पर लेटकर आँखें बन्द कर लेता है। चम्पा कमरे में इधर-उधर टहलने लगती है। चारपाई के पास खड़ी होकर नरेन्द्र की ओर देखने लगती है।

चम्पा

नींद आ रही है ?

नरेन्द्र

नहीं तो।

चम्पा

आँखें बन्द हैं !

नरेन्द्र

हाँ·····

चम्पा

आप चाहते क्या हैं, इसका ध्यान रखिये। रोज़-रोज़ का झंझट मिट जाना चाहिये।

नरेन्द्र

जब तक ज़िन्दगी है, झंझट नहीं मिट सकता। [ चम्पा की ओर देखने लगता है ]

चम्पा

इसका मतलब कि नरक से छुट्टी नहीं मिलेगी ?

नरेन्द्र

नरक तो तुम्हारे हृदय में है। उसे निकाल दो। अगर तुमने उससे प्रेम किया भी था, तो कोई बात नहीं—तुम्हें राजकुमार के सामने आत्मसमर्पण करना होगा।

चम्पा

इसलिये कि मैं स्त्री हूँ ?

नरेन्द्र

हाँ, इसी लिये। स्त्री सदैव पुरुष की आश्रित रहेगी

चम्पा

लेकिन यही तो मैं नहीं चाहती। मैं अकेले रहूँगी !

नरेन्द्र

कहाँ...

चम्पा

धरती में, आकाश में, पाताल में, जहाँ चाहूँगी वहाँ।

नरेन्द्र

लेकिन इस तरह तुम अपनी रक्षा नहीं कर सकोगी।

चम्पा

लेकिन मेरे पास अब है ही क्या जिसकी कि रक्षा करनी पड़ेगी ?

नरेन्द्र

तुम्हारे पास अब कुछ नहीं है ?

चम्पा

कुछ नहीं, मैं तो मर चुकी। पाँच वर्ष पहले ही मर चुकी !

नरेन्द्र

[ चारपाई पर बैठते हुए ] तुम मर चुकीं पाँच वर्ष पहले !

चम्पा

जी हाँ। आप जब सब कुछ जान गये। मैं अब भी अपना पहला प्रेम नहीं छोड़ सकी।

नरेन्द्र

लेकिन तुम्हारे उस प्रेमी को तुम्हारी चिंता नहीं है।

चम्पा

यह कैसे कहा जा सकता है?

नरेन्द्र

इसलिये कि वह तुम्हारे सामने है, तुम उसे देखतीं नहीं। तुम्हारी शिक्षा ने तुम्हारे मन में एक प्रकार का दुराग्रह, दुस्साहस, पैदा कर दिया है। शत्रुसूदन ने तुम्हारे साथ शादी कर ग़लती की थी, तुम उसीका बदला लेना चाहती हो। लेकिन इसमें तुम्हारा नाश हो रहा है। पुरुषों के आश्रय में स्त्रियों का रहना तुम्हारी समझ में उनकी अयोग्यता है, लेकिन प्रकृति बदली नहीं जा सकती। नारी-सुधार और नारी-समस्या के नाम पर स्त्री पुरुष नहीं बनाई जा सकती। [ चम्पा उसकी ओर विस्मय और उद्वेग से देखती रहती है ] क्या सोच रही हो?

चम्पा

तो तुम...

नरेन्द्र

हाँ, मैं ही। मैंने यह वेश केवल इसी लिये बनाया है कि तुम्हें समझा दूँ, तुम्हारे रास्ते से हट जाऊँ—तुम नये उत्साह और जीवन-बल के साथ जीवन प्रारम्भ करो। स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध किसी आध्यात्मिक आधार पर नहीं, नितांत भौतिक है। उसे और भी आकर्षक, सम्मोहक और विनाशात्मक बनाने के लिये आध्यात्मिक रङ्ग चढ़ाया जाता है।

चम्पा

निष्ठुर...[ उसकी आँखों से आँसू चल पड़ते हैं ]

नरेन्द्र

क्योंकि इसमें मेरी और तुम्हारी दोनों की मुक्ति है न? मैं निष्ठुर ज़रूर हूँ; लेकिन मेरी कोमलता भी तुम्हारे दुखों का अन्त नहीं कर सकती। राजकुमार के साथ रहने में अगर तुम्हारे लिये आत्म-बलिदान है—तो मेरे साथ रहने में तो आत्महत्या। दस-पाँच वर्ष का सुख-सम्भोग

लालसाओं की निवृत्ति नहीं कर सकता। आग घी से नहीं—पानी से बुझाई जाती है। राजकुमार के साथ रहने पर तुम्हारी चेतना नहीं मारी जायेगी...तुम अपने भीतर सारे संसार की धड़कन का अनुभव करोगी। तुम्हारा जीवन केवल तुम्हारा न होकर सारे संसार का होगा! ज़िंदगी उसीकी होती है जो उसे छोड़ना जानता है।

चम्पा

आज शायद प्रलय का दिन है।

नरेन्द्र

प्रलय तो हो चुका। अब तो फिर सृष्टि हो रही है। इसमें रुकावट न डालो। इसे होने दो। हाँ, होने दो। हमारा...हम सब लोगों का नया जन्म हो, नई परिस्थिति और नई जगह में हमलोग इस तरह मिलें जैसे पहले-पहल मिल रहे हों। नारी-समस्या व्याख्यानों और प्रस्तावों से तब तक नहीं सुलझाई जा सकती जब तक कि स्त्री स्वयं अपना हृदय न बदल ले—अपनी आँखों का आँसू और हृदय का उद्वेग रोककर अपने से ऊँचे न पहुँच जाय। [ उठकर उसके

कन्धे पर हाथ रखकर ] बस इसी क्षण, इसी क्षण, तुम्हें अपना हृदय बदल लेना होगा—नहीं तो फिर तुम्हारे लिये कोई आशा नहीं, और केवल तुम्हारा असंयम हम-सबको ले डूबेगा ! [ अलग हटकर खड़ा होता है ]

चम्पा

[ उसकी ओर देखकर ] अच्छा, तो मैं क्या करूँ ? [ उसका स्वर टूट जाता है और उसकी आँखों से झर-झर-झर-झर आँसू गिरने लगते हैं। उसकी हिचकी बँध जाती है और वह एकाएक फ़र्श पर बैठकर हाथों में अपना मुँह छिपाकर पृथ्वी से सिर टेक देती है। नरेन्द्र अपनी आँखें स्थिर और कुछ तिरछी कर उसे देखने लगता है। क्षण-भर बाद ही शत्रुसूदन प्रवेश करते हैं। शत्रुसूदन स्तम्भित होकर यह सब देखने लगते हैं। नरेन्द्र शत्रुसूदन की ओर देखता है, उसकी आँखे लाल हो रही हैं। ]

शत्रुसूदन

स्वामीजी...

नरेन्द्र

राजकुमार, इसका दुःख [ चम्पा की ओर संकेत कर ] इसके एक-एक बूँद रक्त और इसकी एक-एक साँस में व्याप्त हो चुका है। यही अवसर है, तुम अपनी प्रवृत्तियों को रोककर

आगे बढ़ो—इसे उठा लो, इसे क्षमा कर दो। केवल मनुष्य होने से काम नहीं चल सकता। देवता बनो...देवता। इसे उठा लो। इसकी सन्तप्त आत्मा को शान्ति दो। यही तुम्हारा काम है। तुम राजा हो और राजा का यही धर्म है।

शत्रुसूदन आगे बढ़ता है। चम्पा को पकड़कर उठा लेता है। चम्पा अपने अंगों को शिथिल कर देती है, उसका सिर झुककर शत्रुसूदन के कन्धे पर आ जाता है। शत्रुसूदन अपना दायाँ हाथ उसके ललाट पर रखता है जिसके भीतर उसकी आँखें छिप जातीं हैं।

नरेन्द्र

आज से मैं तुम्हारा प्रतिद्वन्दी नहीं रहा राजकुमार! मेरा राजयोग आज समाप्त हो गया। आज मैं फिर वही नरेन्द्र हूँ...

शत्रुसूदन

[ चौंककर ] अयँ! तो यहाँ भी मेरी पराजय...नरेन्द्र...

चम्पा सीधी खड़ी हो जाती है।

नरेन्द्र

[ मुस्कराते हुए ] जी... [शत्रुसूदन बढ़कर उसका हाथ पकड़ लेता है ] हाँ, कहिये।

शत्रुसूदन

हाँ, मैं हार गया। अच्छा, अब मुझे क्षमा कर दो। तुम्हारा राजयोग सफल हुआ। बोलो, मुझे क्षमा करते हो या नहीं ?

नरेन्द्र

क्षमा—राजकुमार, एक वार नहीं, हजार वार तुम्हें क्षमा कर आज मैं फिर नरेन्द्र होता हूँ।

रघुवंशसिंह का प्रवेश, उनके पीछे गजराज है।

रघुवंश

नरेन्द्र !

नरेन्द्र

जी हाँ...मैं ही।

रघुवंश शत्रुसूदन की ओर देखते हैं।

शत्रुसूदन

मेरी भूल थी दीवानसाहब ! आपकी गद्दी पुश्तैनी है।

नरेन्द्र

लेकिन मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता। मैं तो... यहाँ राजयोग की समाप्ति...अब कर्मयोगी बनूँगा, और

उसके बाद फिर ज्ञानयोग। [ रघुवंश की ओर देखकर ] बाबूजी, मैं अब अपनेको बाँध नहीं सकता। आप समझते हैं, मुझे इसमें दुःख है; लेकिन यह भ्रम है। मेरे सुख का—मेरे योग का—आज नया आरम्भ है।

शत्रुसूदन

तब तो तुमने मुझे क्षमा नहीं किया!

नरेन्द्र

यह कैसे?

शत्रुसूदन

मेरे यहाँ रहना नहीं चाहते।

नरेन्द्र

इसलिये कि मेरा जीवन केवल तुम्हारे लिये नहीं, सारे संसार के लिये है।

गजराज का प्रवेश।

संसार मुझे अपनी ओर बुला रहा है और मैं अब जा रहा हूँ। [ गजराज से ] तुमने क्या तय किया जी?

गजराज

हाँ...मैं तो...[ कमरे में चारों ओर देखता है। ]

नरेन्द्र

[ उसका हाथ पकड़कर ] बाबूजी, राजकुमार और चम्पा तो यहीं रहेंगे। इन लोगों की सुलह हो गई और तुम...

गजराज

मैं तो यहाँ नहीं रह सकता। अब नौकरी नहीं...।
[ एकबार चम्पा की ओर देखकर शत्रुसूदन की ओर देखता है। ]

नरेन्द्र

अच्छा हो तुम भी मेरे साथ चलो। बाबूजी आप किस दुःख में पड़गये। राजकुमार आपका ख्याल करेंगे। राजकुमार! हो सकेगा या नहीं?

शत्रुसूदन

दीवान साहब...पिता की तरह...।

नरेन्द्र

अब अधिक नहीं। मैं निश्चिन्त हूँ। चलोजी...नहीं

**ठहरो।** [ अलफ़ी, कामदार चादर, कटार और पान के डिब्बे, एक-एक कर चारपाई पर रखता है। जूता वहीं फर्श पर निकाल देता है। ] **इन चीज़ों की अब क्या ज़रूरत। राजयोग की चीज़ें राजा के साथ। कर्मयोग में तो दो गज़ के दो वस्त्र...इतने ही में काम चलता रहेगा!** [ रघुवंश वहीं फर्श पर बैठ जाते हैं। ]

[ शत्रुसूदन, चम्पा, रघुवंशसिंह सब देखते ही रह जाते हैं। गजराज के साथ नरेन्द्र बँगले के बाहर चला जाता है। ]

**इति शुभम्।**

